बघेली व्याकरण

डॉ. सूर्यभान सिंह

मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

बघेली व्याकरण

डॉ. सूर्यभान सिंह
एम.ए., पी-एच.डी., एम.एड.

मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी

बघेली व्याकरण : डॉ. सूर्यभान सिंह

BAGHELI VYAKARAN : Dr. Suryabhan Singh

ISBN : 81- 7327-173-9

- प्रादेशिक भाषाओं में विश्वविद्यालय स्तरीय ग्रन्थों के निर्माण की, भारत सरकार के मानव संसाधन विकास मंत्रालय (शिक्षा विभाग) की केन्द्र प्रवर्तित योजनान्तर्गत, भारत सरकार के द्वारा रियायती दर पर उपलब्ध कराये गये कागज़ पर मुद्रित एवं मध्यप्रदेश शासन की ओर से प्राप्त अनुदान की मदद से रियायती मूल्य पर मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल द्वारा प्रकाशित।

प्रकाशक : मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी,
रवीन्द्रनाथ ठाकुर मार्ग, बानगंगा,
भोपाल (म.प्र.) 462 003
दूरभाष (0755) 2553084
फैक्स (0755) 2762123

संस्करण : प्रथम 2007

मूल्य : रु. 40.00 (चालीस) मात्र

कंपोजिग : रमा ग्राफिक्स, एल आई जी 29, लुम्बिनी परिसर, माता मंदिर, भोपाल

मुद्रक : भण्डारी ऑफसेट, भोपाल (म.प्र.) दूरभाष- 2463769

प्राक्कथन

मातृभाषा के माध्यम से अध्ययन निर्विवाद रूप से श्रेयस्कर एवं लाभदायी है, इसे सभी शिक्षाविदों ने माना है। इससे विद्यार्थियों की सृजनशीलता को प्रोत्साहन तो मिलता ही है, साथ ही ज्ञान के गहन गंभीर विचारों को समझने में आसानी होती है। इसी से जुड़ा एक महत्वपूर्ण पक्ष यह है कि अपनी भाषा से लगाव का निहितार्थ अपनी जड़ों से, अपनी संस्कृति से जुड़े रहना भी है। उच्च स्तर तक की शिक्षा हिन्दी माध्यम से उपलब्ध कराने में सुविधा के लिए मध्यप्रदेश सहित देश के सभी हिन्दी भाषी राज्यों में 1970 से हिन्दी ग्रन्थ अकादमियाँ स्थापित की गयीं। इन पैंतीस वर्षों में अकादमियों ने लक्ष्यानुरूप बड़ा अच्छा कार्य किया है। मेरे लिये यह बड़े सन्तोष का विषय है कि मध्यप्रदेश की यह अकादमी अपनी कार्य उपलब्धियों में सबसे आगे है। मेरा मानना है कि प्रदेश के प्राध्यापकों के सहयोग की इसमें बड़ी अहम् भूमिका रही है।

मैं अनुभव करता हूँ कि एक ओर जहाँ यह आवश्यक है कि हिन्दी माध्यम में स्नातकोत्तर स्तर के साथ विभिन्न विषयों की आधुनिकतम अवधारणाओं पर स्तरीय पुस्तकें, पुस्तिकाएँ प्रकाशित हों वहीं दूसरी ओर यह भी आवश्यक है कि प्रकाशित पुस्तकों में संशोधन परिवर्द्धन के सघन प्रयत्न निरंतर किये जाएँ। इस प्रक्रिया में यह भी देखा जाये कि पुस्तकों की भाषा सरल एवं विद्यार्थी के स्तरानुरूप हो। हिन्दी माध्यम से अध्ययन करने वाले विद्यार्थियों के व्यापक हित की दृष्टि से इस दिशा में कार्य करना आवश्यक है। मेरा मानना है कि इससे पुस्तकों की प्रमाणिकता और उपयोगिता निश्चित रूप से बढ़ेगी। लेखकों एवं वरिष्ठ प्राध्यापकों से भी मेरा आग्रह है कि वे सृजनात्मक सहयोग तो दें ही, अपने मार्गदर्शन एवं सुझावों से अकादमी को उपकृत भी करें।

हिन्दी भाषा के चहुँमुखी विकास के लिए कार्य कर रही अकादमी मध्यप्रदेश शासन उच्च शिक्षा विभाग द्वारा पोषित संस्था है।

केन्द्रीय मानव संसाधन विकास मंत्रालय से, नयी पुस्तकों के लेखन-प्रकाशन के लिये आर्थिक सहायता मिल रही है। स्पष्ट है कि अकादमी की ग्रन्थ प्रकाशन योजनाओं का क्रियान्वयन शासन के सहयोग से हो रहा है।

प्रदेश की सभी उच्च शिक्षा संस्थाओं एवं उनके प्राध्यापकों से मेरी यही अपेक्षा है कि वे अकादमी को अपनी संस्था मानें और इसके प्रकाशनों को यथाशक्ति समर्थन एवं प्रश्रय दें, क्योंकि इसका सीधा सम्बन्ध राष्ट्रभाषा हिन्दी से, हमारी अपनी मातृभाषा से है।

(तुकोजीराव पवार)
राज्य मंत्री (स्वतंत्र प्रभार),
मध्यप्रदेश शासन
उच्च शिक्षा एवं तकनीकी शिक्षा तथा
अध्यक्ष
मध्यप्रदेश हिन्दी ग्रन्थ अकादमी, भोपाल

सम्पादकीय

बघेली का व्याकरण कमानी की तरह लचीला है, पर रीढ़हीन केचुआ नहीं। बघेली पर भानु सिंह (भरतपुर) और डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ल का काम भाषिक अध्ययन का उद्गम है। बघेली यहां बघेलों के आने से पहले मौजूद रही है। जैसे बुन्देली, बुन्देलों के आने से पहले अस्तित्व में रही है। संस्कृत के तत्सम शब्दों का तद्भव (अप्रभंश) में बदलने की सटीक व्याख्या जहां डॉ. हीरालाल शुक्ल ने प्रस्तुत की है वहीं डॉ. रामसुन्दर पाठक ने लन्दन जाकर बघेली फोनटिक्स पर काम कर गये हैं।

बघेली व्याकरण को किताब के रूप में किसी ने नहीं प्रस्तुत किया है। व्याकरण बोली के प्रयोगों में प्रच्छन्न होता है और उसे किसी समिति के दो-चार सम्पादकों द्वारा निर्मित नहीं किया जाता, ऐसा करना नकली आरोपण होता है।

व्याकरण भाषा को नियंत्रित और गठित करता है, पर भाषा के मिज़ाज का अध्ययन नहीं करता। भाषा विज्ञान को व्याकरण का व्याकरण कहा जाता है। व्याकरण एक सीमा तक भाषा विज्ञान को निरंकुश नहीं होने देता। सरलीकरण के नाम पर कोश से व्याकरण हटाने का तुगलकी प्रयोग अमेंरिका में भी किया गया, पर वहाँ भी व्याकरण को अमान्य नहीं किया गया। व्याकरण के अभाव में कोई भी भाषा बोली तक ही सीमित रह जाती है, वह विभाषा की बाड़ को पार कर भाषा तक नहीं पहुँचती है। डॉ. सूर्यभान सिंह ने बघेली बोली में डुबकी लगाकर इसके व्याकरण को सरस और सुबोध रूप में सामने लाकर बघेली को उसकी संभावनाओं से दो-चार किया है। व्याकरण और रचनात्मक साहित्य के अभाव के कारण भाषा वैज्ञानिकों द्वारा बघेली को अवधी की बॉदी कहकर पुकारा गया है, किन्तु बघेली के क्रियापद अवधी से भिन्न है। बघेली में अभी तक जो सार्थक, रचनात्मक एवं नये प्रयोग किये है वे छत्तीसगढ़ी में नहीं है। बघेली छत्तीसगढ़ी से अधिक पुरानी है। छत्तीसगढ़ी के प्रारंभिक शिलालेख छत्तीसगढ़ी में न होकर बघेली में लिखे हैं। भाषाविद् डॉ. हीरालाल की भी यही मान्यता है। छत्तीसगढ़ में मराठों के कब्जे के कारण वह गोड़ी बघेली से कुछ भिन्न हो गई है, यदि तत्सम और तद्भव शब्दों का बारीक अध्ययन किया जाय तो ऐसा प्रतीत होता है कि वह अवधी के उद्भव से अधिक पुरानी लगती है। अभी इस क्षेत्र में काम बहुत कम हुआ है।

अवधी को जायसी और तुलसी मिले। बघेली को हरिदास, बैजू और सैफू आदि। बघेली को आंचलिकता से राष्ट्रीयता और अन्तर्राष्ट्रीयता की ओर प्रो.आ.प्र.सिंह ने उन्मुख किया। कालिका प्रसाद त्रिपाठी, अनूप अशेष, विजय सिंह आदि नई उपलब्धियाँ और संभावनाएँ लेकर आए, इन लोगों ने बघेली में नवगीत लिखकर इसे तरोताजा भी किया है। बघेली कविता का प्रयोग विविध विधाओं में किया गया, पर बघेली का गद्य आकाशवाणी के ईद-गिर्द घूमता रह गया,

जबकि भोजपुरी और छत्तीसगढ़ी में पद्य के साथ गद्य का भी माकूल विकास हुआ।

बघेली व्याकरण की सही जानकारी के अभाव में अपने को बघेली का विद्वान कहने वाले न तो बघेली में धारा प्रवाह बोल सकते है और न ही 20-25 विद्वानों के सामने लिख ही सकते। उदाहरण के लिए यह फतबा दे दिया गया कि बघेली में व सर्वत्र ब हो जाता है, किन्तु ऐसा उन्हीं के द्वारा किया गया, जिन्हें बघेली व्याकरण का बोध नहीं है। बघेली में व, ब होता है, पर अपबाद के साथ जैसे गँवपबा, गाँव, नाव इनमें व सर्वत्र ब नहीं होता। बघेली में कर्त्ता का कोई चिह्न नहीं होता ऐसा अज्ञानवश मान लिया है और खड़ी बोली के व्याकरण का उदाहरण दिया गया है। निस्संदेह बघेली में राम ने कहा नहीं होगा, परन्तु राम त कहिन प्रयोग प्रचलन में है। कहीं-कहीं कर्त्ता का चिह्न लुप्त भी हो जाता है। अभी तक विद्वानों ने बघेली समास और संधि के विषय में मौन साध रखा था।

बघेली व्याकरण नामक पुस्तक में डॉ. सूर्यभान सिंह ने संधि-समास का स्पष्ट अध्ययन किया है। बघेली के जो नमूने पेश किए जाते हैं, वे स्वतः बघेली व्याकरण सम्मत नहीं, क्योकि विद्वानों ने संस्कृत, अर्द्धमागधी, भोजपुरी, छत्तीसगढ़ी और अवधी का वांछित अध्ययन-मनन नहीं किया है। यथा बघेली भाषा के उदाहरण के नाम पर जो 'बाप-पूत' नामक लोककथा दी गई है, वह पुनरुक्तियों का पुलिंदा है। "एकै रहै बाम्हन। उनके एक ठे लड़िकै भर रहै बस।" व्याकरण के नाम पर ऐसे नमूने बघेली के विद्यार्थियों को दिग्भ्रमित करते रहे हैं। प्रस्तुत पुस्तक बघेल के व्याकरण के नाम पर छाए कोहरे को काटती है और वास्तविकता को उजागर करती है। यह व्याकरण बघेली के दैनिक व्यवहार के आधार पर लिखा गया है। यह रेडीमेड एवं आरोपित नहीं है। संभवतः इस पुस्तक के पूर्व बघेली व्याकरण पर कोई उल्लेखनीय पुस्तक नहीं लिखी गई।

बघेली को यदि विभाषा से भाषा के रूप में प्रौढ़ और प्रांजल करना है तो उसे परिनिष्ठित बघेली की ओर मुड़ना होगा, साथ ही संस्कृत, हिन्दी, उर्दू और अँगरेजी के उन शब्दों को अपने लहू में घोलना होगा, जो बघेली में खप गए हैं। तुलसी ने किस तरह ठेठ अवधी को परिनिष्ठित अवधी में बदलने का प्रयास किया है इसका एक उदाहरण देखा जा सकता है-

"उदित उदय गिरि मंच पर, रघुबर बाल पतंग।
बिकसे संत सरोज सम, हरषे लोचन भृंग।।"

इसमें हरषे क्रिया पद अपने चुम्बकत्व से संस्कृत और मागधी को एक दिल करता है। बघेली में अभी ऐसा साहस दुर्लभ है। बघेली में स्वाचैं का चाही संकीर्ण तर्ज पर लिखा जाता है, जबकि सोचयँ का चाही परिनिष्ठित बघेली में लिखने से वह मानक स्तर को प्राप्त कर सकती है। बघेली-अवधी, छत्तीसगढ़ी, मिर्जापुरी, बँदहाई, संस्कृत, हिन्दी, अँगरेजी, उर्दू आदि से अनावश्यक परहेज नहीं करती है।

प्रस्तुत बघेली व्याकरण नामक पुस्तक में नई विधाओं के भीतर से अलंकारों एवं छन्दों के जो उदाहरण दिए गए हैं, वे भाषिक साहस के द्योतक हैं, साथ ही लोकोक्तियों, मुहावरों,

पहेलियों और टहूकों के भी नमूने दिए गए हैं। लोकोक्तियाँ अनुभव व्यंजित करती हैं। पहेलियों में कविता के सबसे पुराने बिम्ब और प्रतीक मिलते हैं। मुहावरों में भाषा की लक्षणा शक्ति और गुणवत्ता निहित रहती है। बघेली में स्वरसंधि के केवल दो भेद दीर्घ और गुण मिलते हैं शेष तीन नहीं, वहीं संस्कृत और हिन्दी की व्यंजन एवं विसर्ग संधियाँ बघेली में अवहेलना करती दिखलाई पड़ती हैं। संस्कृत की विभक्तियाँ या हिन्दी के कारक चिह्न भी बघेली में परिवर्तित दिखलाई पड़ते हैं।

हिन्दी क्षेत्र में जो कार्य कामता प्रसाद गुरू ने किया है, वही कार्य डॉ. सूर्यभान सिंह ने बघेली में किया है। फलतः इस पुस्तक के द्वारा बघेली का सही व्याकरण विद्वानों और छात्रों के लिए उपादेय होगा। बघेली की पड़ोसी बोलियों और भाषाओं के लोगो को बघेली कविता पढ़ने में रूचि पैदा होगी। म.प्र.शासन, विश्वविद्यालय रीवा तथा केन्द्रीय शिक्षा विभाग पर इस पुस्तक को प्रकाशित और प्रचारित करने का उत्तरदायित्व है, इससे बघेली के छात्रों और विद्वानों को मातृभाषा में सोचने और समझने की प्रेरणा मिलती रहेगी और वे पड़ोसी बोलियों और भाषाओं का तुलनात्मक अध्ययन करने का साहस कर सकेंगें तथा बघेली बोली को विभाषा और भाषा के रूप में विकसित होने की निर्गुट सामाजिक प्रक्रिया में सक्रिय हो सकेंगे।

निःसंदेह यह पुस्तक विभिन्न पाठ्यक्रमों की खानापूरी करके समाप्त नहीं हो जाती है। वह पाठ्यक्रम को अपने आगोश में समेटती है। साथ ही बघेली के उनसे छूटे हुए बिन्दुओं को भी हाथ से नहीं जाने देती। यह बघेली बोली के अध्यापकों और छात्रों को दिग्भ्रमित नहीं करती हैं। अभी तक बघेली के व्याकरण
सम्बन्धी फुटकर लेखों और टिप्पणियों से यह पुस्तक बेहतर सामग्री अपने उदार तारतम्य में सहेजती और प्रस्तुत करती है। रीवा अंचल के भीतरी और बाहरी भाषिक सम्पर्को तथा उनके सार्थक 'शेड्स' तथा टोनों(Tones) का गहन अध्ययन पृथक भाषा वैज्ञानिक शोध का विषय होगा। विश्वविद्यालयीन पाठ्यक्रमों में इसे प्ररोचित करना सर्वथा न्यायोचित होगा।

म.प्र.हिन्दी ग्रन्थ अकादमी ने प्रस्तुत पुस्तक "बघेली व्याकरण" के प्रकाशन का भार उठाकर जिस अनुकरणीय उदारता का परिचय दिया है, वह श्याध्य है। वस्तुतः यह कार्य भाषा एवं साहित्य पर बरपा पक्षपात के पक्षाघात से मुक्ति का निदर्शन है।

अक्टूबर 12.7.2006

आदित्य प्रताप सिंह
सेवानिवृत्त प्रोफेसर (हिन्दी)
चिरहुला-11, रीवा(म.प्र.)

अपनी बात

किसी भी मानक भाषा की पहचान बनाने में उसके व्याकरण की महती भूमिका होती है। बघेली पूर्वी हिन्दी की तीन बोलियों में से एक है। आज की होड़ के बीच विकास आवश्यक है और चुनौती भी। भाषा में व्याकरण की सार्थक सहभागिता होती रहती है। बघेली का भी अपना व्याकरण है, परन्तु बहुत से विद्वान इस भ्रान्ति धारणा के शिकार रहे हैं कि बघेली का कोई व्याकरण नहीं है। प्रस्तुत पुस्तक इस भ्रम को दूर करती है।

पुस्तक लेखन में यह प्रयास किया गया है कि बघेली के साथ हिन्दी के सुधी पाठकों को बघेली की प्रकृति से परिचित कराया जाय, इस उद्देश्य से परिभाषाएँ एवं उदाहरण हिन्दी में भी रखे गये हैं; साथ ही प्रकरण के विभिन्न भागों में अधिकांशतः एक ही उदाहरण को सभी रूपों में परिवर्तित कर समझ को प्रौढ़ बनाने का प्रयास किया गया है।

आज बघेली में व्याकरण एवं काव्य के समक्ष पक्षों का भरपूर प्रयोग किया जा रहा है। यह अलग बात है कि बघेली मंच, प्रेस, रेडियो, दूरदर्शन, प्रकाशन की वह अवस्था प्राप्त नहीं कर पाई है जो कि उसके लिये आवश्यक थी, फिर भी बघेली रुकी नहीं है, इसका विकास निरन्तर द्रुत गति से चल रहा है। हाइकू, सिजी, सिनरिउ, जापानी तॉका जैसे छन्द बघेली के अपने हो गये हैं। इन नवीन विधाओं के सूत्राधार प्रो.आदित्य प्रताप सिंह हैं, जिन्होने इन्हें बघेली जमीन पर तैयार कर हिन्दी को भी प्रदान किया है। इस पुस्तक में रस, छंद, अलंकार के साथ बघेली मुहावरे, लोकोक्तियाँ, पहेलियाँ, टहूके, संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया, अव्यय के समस्त भेद एवं उनके विभिन्न प्रकारों, उपसर्ग, प्रत्यय, लिंग, वचन, कारक, विलोम और समास तथा संधि पर विस्तृत चर्चा की गई है।

हर भाषा और व्याकरण का सतही और गहन अध्ययन होता है। हर कविता का बाहरी और भीतरी विन्यास होता है। हरिदास, बैजू, सैफू, शम्भू की कविताएँ बघेली की ऊपरी सतह का सार्थक संयोजन करती है; किन्तु बघेली का गहन प्रयोग प्रो. आदित्यप्रताप सिंह, कालिका त्रिपाठी, अनूप अशेष. विजय सिंह परिहार, सनत सिंह, सुदामा शरद आदि के यहाँ दिखलाई पड़ता है। इनकी कविताएँ सतह में तैरने वालो को तथा बघेली सरिता के तट पर बैठे लोगों को अजनबी सी लगती हैं; क्योंकि बघेली की बहती नदी में गहरे पैठने का साहस अभी विकसित हो रहा है। अभी हिन्दी भाषा और व्याकरण के क्षेत्र में 'टेगमीम' जिसकी यह मान्यता है कि भाषा का अध ययन मनुष्य के सम्पूर्ण व्यवहार के एक महत्वपूर्ण अंग के रूप में किया जाना चाहिए। अभी हिन्दी में 'चामस्की' गर्भस्थ है, जिसे आधुनिक पाणिनि कहा जाएगा । संस्कृत के पाणिनि का असम महत्व है, किंन्तु संस्कृत व्याकरण की जकड़बन्दी से संस्कृत एक स्थिर भाषा बन गई है, लेकिन बघेली प्रवाहित सरिता है। भाषा उत्पादक और रचनान्तर करने में सक्षम है।

वह कोई स्थिर परिपाटी नहीं है। बघेली व्याकरण गत्यात्मक है। वाक्य के घटक सृजनात्मक और अर्थात्मक होते रहते हैं। काव्यात्मक वाक्य प्रेरक होते हैं और उनका संबंध गहन व्याकरण और गहन अर्थ से होता है इसीलिए व्याकरण को भी सतह से गहराई में उतरना पड़ता है। इसी कारण बघेली की पुरानी और नई रचनाओं से उदाहरण चयनित किए गए हैं। सतही व्याकरण के साथ 'डेफ्थ ग्रामर' को भी छूने की प्रस्तावना की गई है। इस तरह बघेली की रचनात्मक व्याकरण को सामने लाने का प्रयास किया गया है, उसे टुकड़े-टुकड़ों में बँटी घुच्चुलों से मुक्त करने का भी प्रयास है। बघेली का विकास हो और वह बोली से विभाषा के नाकों को पार कर भाषा का रूप धारण करे इसके लिए परिनिष्ठित बघेली का बोध आवश्यक है। एक नमूना देखा जा सकता है । आबा खाय ल्या या पोहि ल्या इसके स्थान पर यह भी प्रचलित है -अई! पधारी समानी । इया काम कर द्या के स्थान पर इया काम कइ देई आदि । गहन बघेली का एक चित्र- 'बदरी लै कंजर कस डेरा' है तो 'डारि भइसिहा माठा सइगर, सट्ट-सट्ट सरपोटै' बघेली का सतही रूप है। महत्व दोनों का है। बघेली जब विभिन्न बोलियों जैसे-छत्तीसगढ़ी, भोजपुरी, मिर्जापुरी, अवधी से मिलती है तो सरस रहती है; परन्तु बँदहाई में वह बुन्देली से मिलकर लट्ठमार बन जाती है।

पुस्तक को इस कलेवर में प्रस्तुत करने के लिए बघेली के सुधी विद्वान प्रो. आदित्य प्रताप सिंह की प्रेरणा एवं मार्गदर्शन प्राप्त हुआ है। संस्कृत के विद्वान प्रो.शत्रुसूदन प्रसाद पाण्डेय प्रो. बलराम प्रसाद पाण्डेय एवं श्री सदानंन्द मिश्रा तथा श्री मुकुन्दलाल तिवारी, श्री नागेन्द्र सिंह (म. प्र.विधानसभा सदस्य) का सम्बल भी मिला है; वहीं चिंतन एवं लेखन में अग्रज श्री मोहन सिंह(सेवानिवृत्त, संयुक्त कलेक्टर) एवं चिरंजीव राजेश ने महत्वपूर्ण भूमिका का निर्वहन किया है। मै बघेली के उन कवियों, लेखकों को भी नहीं भुला सकता जिनकी रचनाओं एवं परामर्श का उपयोग मैने इस पुस्तक में किया है। परिवार के सभी सदस्यों को कैसे भुला दूँ, जिनके सहयोग से विचारों को मूर्तरूप में प्रस्तुत करने का साहस कर सका। पुस्तक को टंकित करने वाले श्री नागेन्द्र सिंह कर्चुली एवं अमित कुमार मिश्र को भी नहीं भुलाया जा सकता। पुस्तक के मुद्रक का सहयोग भी महत्वपूर्ण है।

अंत में सुधी पाठकों से अनुरोध है कि वे निःसंकोच अपने विचारों से मुझे अवगत कराते रहे, ताकि आगामी संस्करणों में उनके सुझावों का लाभ लिया जा सके।

अक्टूबर 2005

डॉ. सूर्यभान सिंह

एम.137 दीनदयाल धाम

कालोनी पड़रा रीवा (म.प्र.)

पिन कोड- 486001

विषय सूची

व्याकरण पक्ष

अध्याय 1

बघेली स्वर एवं व्यंजन ध्वनियाँ

वायु ध्वनियों का मूलाधार है। स्वर नेता है। व्यंजन अनुचर है। दोनों है आगे-पीछे, साथ-साथ भी। अ ध्वनि ईश्वर की तरह सर्वत्र व्याप्त है।

मुँह में जिह्वा विविध स्थानों पर चल और ठहर कर विविध ध्वनियाँ रचती है। कहा गया है- 'स्वयं राजन्ते स्वरा अन्वग् भवति व्यञ्जनम्' स्वर स्वाबलंबी ध्वनियाँ है तथा व्यंजन परावलंबी। कहीं स्वर व्यंजन का भेद धुधँला जाता है। र् और य् लहरे, स्वर और व्यंजन के बीच आती हैं। बघेली स्वर और व्यंजन ध्वनियाँ देखिए -

बघेली स्वर ध्वनियाँ

1:-	अर्द्ध विवृत मध्य स्वर	-	अ
2:-	विवृत पश्च दीर्घ स्वर	-	आ
3:-	संवृत हस्व अग्र स्वर	-	इ
4:-	संवृत दीर्घ अग्र स्वर	-	ई
5:-	संवृत पश्च हस्व स्वर	-	उ
6:-	संवृत पश्च दीर्घ स्वर	-	ऊ
7:-	अर्द्ध संवृत दीर्घ अग्र स्वर	-	ए
8:-	अर्द्ध विवृत दीर्घ अग्र स्वर	-	ऐ (अइ)
9:-	अर्द्ध संवृत दीर्घ पश्च स्वर	-	ओ
10:-	विवृत दीर्घ पश्च स्वर	-	औ (अउ)
	व्यंजन मिश्रित नासिक्य स्वर	-	अं
	विसर्ग मिश्रित	-	अः (प्रयोग बघेली में नहीं होता)

बघेली व्यंजन ध्वनियाँ

प्रयत्न की दृष्टि से भेद -

1:- कोमल तालव्य (स्पर्श) - क्, ख्, ग्, घ् ।

2:- तालु (वर्त्स-स्पर्श संघर्षी) - च्, छ्, ज्, झ्! ।
3:- मूर्द्धन्य (स्पर्श), - ट्, ठ्, ड्, ढ् ।
4:- ओ-ठ्य (स्पर्श) - प्, फ्, ब्, भ् ।
5:- नासिक्य (स्पर्श) - ङ्, ञ्, ण्, न्, म् ।
6:- अर्द्धस्वर - य्, र्, ल्, व् ।
7:- संघर्षी - :[, स्, ह् ।

संयुक्त व्यंजन :- इनका प्रयोग बघेली में निम्न प्रकार से हो जाता है। यथा

क्ष (च्छ) त्र (तर) ज्ञ (ग्य) श्र (सर) ।

आगत व्यंजन- ड़, ढ़ ।

विशेष दृष्टव्यः- बघेली में प्रायः अपवाद के साथ व के स्थान पर (ब) श के स्थान पर (स) एवं ष के स्थान पर (ख), क्ष के स्थान पर (च्छ) त्र के स्थान पर (तर) ज्ञ के स्थान पर (ग्य) श्र के स्थान पर (सर) ऐ के स्थान पर (अइ) औ के स्थान पर (अउ) का प्रयोग किया जाता है।

हिन्दी में संयुक्ताक्षर ग्रंथि को सुलझाते हैं; परन्तु बघेली में आकर वे उसी के रंग में रंग जाते है। यहाँ संयोग नहीं संयुक्ताक्षरों का पल्लवन हुआ है। बघेली की प्रीति संकुचन में न होकर विराट में है। बघेली में विसर्ग का लोप हो जाता है। यही कारण है कि बघेली में ऐसे शब्द तो होते हैं; परन्तु विच्छेद करने पर विसर्ग की स्थिति स्पष्ट नहीं होती। परिणामतः विसर्ग संधि नहीं बन पाती। अतः विसर्ग का प्रयोग बघेली में नहीं हो पाता।

संज्ञा

जिन शब्दों के द्वारा किसी व्यक्ति, स्थान, जाति, समूह, पदार्थ, गुण, दशा, भाव स्थिति तथा स्वभाव आदि के नाम का बोध होता है, वे शब्द संज्ञा कहे जाते हैं। विशेषण शब्द तक नाम बोधक होने पर संज्ञा बन जाते हैं। यथा-महँगा से महँगुआ, छोटा से छोटकउना या छोटे, बड़ा से बड़कऊ/ बड़कउना या बड़का आदि। बघेली में भी संज्ञा के तीन भेद जाने जाते हैं-

1:- **व्यक्तिवाचक संज्ञा** :- जिन शब्दों से किसी खास व्यक्ति, वस्तु या स्थान विशेष का बोध होता है, उन्हें व्यक्तिवाचक संज्ञा के नाम से जाना जाता है। यथा- लच्छू, पलरजिया, रीमाँ, बीहर, कइमोर आदि।

विशेष :- बघेली में व्यक्तिवाचक संज्ञा के साथ किसी व्यक्ति के नाम में- इनमा, इनिया, इलिया, बा, इया, उआ, जैसे अंत में प्रत्यय जोड़कर संबोधित करने की परम्परा थीं, जो कुछ जातियों एवं क्षेत्रों तक ही सीमित रही; परन्तु अब यह परम्परा समाप्त हो चली है। यथा गयादीन से गइदिनमा, मंगल से मंगलबा, रामधनी से रमधनिया, लक्ष्मी से लछमिनिया, कौशिल्या से कउँसिलिया आदि।

2:- जातिवाचक संज्ञा :- परम्परानुसार जिन शब्दों से किसी जाति, वर्ग या वस्तु का बोध होता है, उसे जातिवाचक संज्ञा के नाम से जाना जाता है। यथा--सहर, कूकुर, बिलारी, बाम्हन, अहिर, पहार, भँइसी, बरदा, घोड़, अमरा, बीही, बनका, सुआ (शहर, कुत्ता, बिल्ली, ब्राम्हण, अहीर, पहाड़, भैंस, बैल, घोड़ा, आँवला, अमरूद, जंगल, तोता आदि।

3:- भाववाचक संज्ञा :- जिन शब्दों से किसी व्यक्ति, वस्तु या पदार्थ के गुण, दशा, स्थिति, भाव, स्वभाव आदि का बोध होता है, उसे भाववाचक संज्ञा के नाम से जाना जाता है। ई, पन, हट, आहट उँछ आदि शब्द लगाने से प्रायः बघेली की भाववाचक संज्ञाएँ बनती हैं। प्रायः प्रत्यय के रूप में इनका प्रयोग करके भाव वाचक संज्ञाएँ बनाई जाती है। यथा--लउधरई(गंदगी), पोहगरई (कुशलता), सिधाई (सरलता), निकाई (अच्छाई), बम्हनई (ब्राहूमणत्व), लइमरई (निकम्मापन), अपनपव (अपनत्व), हुसियारी (होशियारी), सुन्दरई (सुन्दरता), घबराहट (घबड़ाहट), सुघरपन (सुन्दरता), लुंगरपन (लुंगारापन), थरथराहट (कँपकपी), लइमरपन (कामचोरी), पियरउँछ (पीलापन), करिअउँछ (कालापन) आदि ।

विशेष :-प्रयोग के अनुसार कभी-कभी भाववाचक संज्ञा विशेषणमय हो जाती है।
यथा :- लाल से लालिमा, भाववाचक संज्ञा है; परन्तु लालिमा से युक्त दिन में लालिमा विशेषण युक्त है।

सर्वनाम

संज्ञा के बदले में बोले जाने वाले शब्द सर्वनाम कहलाते हैं। हम, तँय, अपना, आपन, इनखा, तोर, तोहाँर, उनखर, तोहई, तुहिन, उँइ, हमसे, तोंहसे बघेली के प्रमुख सर्वनाम है। यथा-

रमेंस खेलत हय के स्थान पर (उआ खेलत हय), लड़िका दउड़त हें के स्थान पर (उँइ दउड़त हें) घर राधा केर आय के स्थान पर (घर ओखर आय) यहाँ रमेश, लड़िका एवं राधा संज्ञा शब्द है, जिनके स्थान पर को-ठक में दिए वाक्यों में क्रमशः उआ, उँइ एवं ओखर/एखर शब्द आए हैं। चूँकि ये शब्द संज्ञा के बदले में आए हैं; इसलिए सर्वनाम हैं।

सर्वनाम शब्द एवं उनके बहुवचन

एक वचन	बहुवचन
हम/हमहीं (मैं)	हमपंचे/हमहीं पचन (हम लोग)
तँय/तुमहीं (तुम)	तुम पंचे/तुमहीं पचन (तुम लोग)
अपना (आप)	अपना पंचे/पचे/पाँच (आप लोग)
आपन/हमार (अपना)	आपन पचन/हमारपचन (हम लोगों का)
इनखा (इनका)	इनहीं पचन/पंचन (इन लोगों को)

तोर/तोहाँर (तुम्हारा)	तुमहीं पचन/पाचन/पंचन(तुम लोगों को)
उनखर (उनका)	उनहीं पचन/पाचन/पंचन(उन लोगों को)
तोंहँई (तुम्हारा)	तोहँई पचन/पाचन/पंचन (तुम लोगों को)
तुहिन/तहिन (तुम्ही)	तुहिन/तुम्हिन पचे/पंचे (तुम्ही लोग)
उँइ (वह)	उँइ पचे/पंचे (वे लोग)
हमसे (मुझसे)	हमसे पंचन/पांचन (हम लोगों से)
तोहसे (तुमसे)	तोहसे पंचन/पाचन/पचन (तुम लोगों से)

सर्वनाम के प्रकार

सर्वनाम के छः प्रकार हैं :-

01. पुरूषवाचक सर्वनाम :- जिन शब्दों से बोलने वाले, सुनने वाले एवं जिसके बारे में बात की जाती है का बोध होता है, उसे पुरुष वाचक सर्वनाम कहते हैं। । निष्कर्षतः पुरुषों का बोध कराने वाले शब्दों को पुरुष वाचक सर्वनाम कहते हैं। इन्हें तीन भागों में विभाजित किया गया है-

1. उत्तम पुरूष (बात कहने वाला) हम, हमार, मोर, मोहीं, हमका, मँय, लेकिन मँय का प्रयोग बहुत कम होता है। हम पढ़ब (हम पढ़ेगें) हमार खेत आय (हमारा खेत है) मोहीं जाय का हय (मुझको जाना है)

2. मध्यम पुरूष :- (बात सुनने वाला) अपना, अपना से, तँय, तोंहका, तोहसे, तोसे आदि शब्द आते हैं। यथा-तुम कहाँ जाय रहूया हय (तुम कहाँ जा रहे हो) अपना पंचे जई। (आप लोग जायें) तोंहसे कुछ कहय का हय (तुमसे कुछ कहना है) आदि ।

3. अन्य पुरूष :- (जिसके बारे में बात की जा रही है) उआ, ओही, उनका, उनही, उनखर, उनसे, ओसे आदि शब्द आते हैं। यथा-उआ आयगा हय (वह आ गया है) उनका पइसा चाही (उनको पैसा चाहिये) उनहीं पंचन का अइसा न करय का चाही (उन लोगों को ऐसा नहीं करना चाहिए) आदि ।

02. निजवाचक सर्वनाम :- जिन सर्वनाम शब्दों का प्रयोग कर्त्ता कारक के रूप में स्वय के लिये किया जाता है वे निज वाचक सर्वनाम कहे जाते हैं।

यथा-अपना, अपना-पंचे, हमही, हमहीं पंचन । हमीं पचन आदि। हमहीं पोथी पढ़य का हय (हमें पुस्तक पढ़नी है) अपने का आमा धरे हँय (अपने को आम रखे हैं) हम सोबत मा चिल्लाय पड़ित हँयन (हम सोते समय तेजी से बोलते हैं आदि। यहाँ पर अपना, हमही, एवं हम कर्त्ता के रूप में स्वयं के लिये प्रयुक्त हुए हैं, जिससे ये निज वाचक सर्वनाम है।

03 निश्चयवाचक सर्वनाम :- जिस सर्वनाम शब्द के द्वारा किसी निश्चित व्यक्ति या वस्तु की ओर संकेत होता है, उसे निश्चयवाचक सर्वनाम कहते हैं। यथा-इया, उआ, इनही,

उनहीं, इनखा पंचन, उनका पचन। इनहीं दउड़य का हय (इनको दौड़ना है) ईं पंचे घर जात हँय (ये लोग घर जा रहे हैं) इया सड़क ठीक हय (यह सड़क अच्छी है) आदि । यहाँ पर इनहीं, ईंपंचे, इया निश्चित वस्तु की ओर संकेत करने के कारण निश्चय वाचक सर्वनाम है।

04. अनिश्चयवाचक सर्वनाम :- जिन सर्वनाम शब्दों से किसी अनिश्चित व्यक्ति या वस्तु का बोध होता है, उसे अनिश्चय वाचक सर्वनाम कहते हैं। यथा-कउनो कुछू, कउनो-कउनों, कबय-कबय, कोऊ-जोऊ, काही, काही-काही, केखा, केखा-केखा आदि प्रमुख बघेली के अनिश्चय वाचक सर्वनाम है। कउनों धान निकही नहीं जामय (कोई धान अच्छी तरह से अंकुरित नहीं हो रही है) आज काही आबय का हय (आज किसको आना है) कहँव-कहँव पानी बरसा हय (कहीं-कहीं पानी वर्षा है) आदि । यहाँ पर कउनों, काही एवं कहँव-कहँव अनिश्चितता का बोध कराने के कारण अनिश्चय वाचक सर्वनाम है।

05. संबंधवाचक सर्वनाम :- जिन सर्वनाम शब्दों से आपसी संबंध का बोध होता है, उसे संबंध वाचक सर्वनाम कहते हैं। यथा- जे, जे-जे, जउन लोग जिनखर, जेखर, आदि प्रमुख बघेली संबंध वाचक सर्वनाम है। जे-जे आये हँय, सबका खाना खबाबा (जो-जो आये हैं, सभी को खाना खिलाओ) जेखर हिम्मत होय साँप का मारय (जिसकी हिम्मत हो सर्प को मारे) जिनखर खेत आय, उँइ अउबय नहीं भें (जिनका खेत है, वे आये ही नहीं हैं) आदि । यहाँ पर जे-जे, जेखर, जिनखर संबंध का बोध कराने के कारण संबंध वाचक सर्वनाम है।

06. प्रश्नबाचक सर्वनाम :- जिन सर्वनाम शब्दों का प्रयोग प्रश्न करने के लिये किया जाता है, उसे प्रश्नवाचक सर्वनाम कहते हैं। कउन, काही, कउन-कउन, कही-काही, का, का-का, कइसन, कबय, केखर, का आय, कबय-कबय आदि प्रमुख बघेली प्रश्नबाचक सर्वनाम हैं।

यथा- उआ कबय चलागा ? (वह कब चला गया) उआ तोहका का लइ आबा हय ? (वह तुमको क्या ले आया है) उआ गोहूँ काहे नहीं दिहिस ? (उसने गेहूँ क्यों नहीं दिया) आदि। यहाँ पर कबय का, काहे विभिन्न शब्दों के साथ जुड़कर प्रश्न का बोध कराने के कारण प्रश्नवाचक सर्वनाम है।

नोट :- प्रश्नवाचक सर्वनाम जब किसी संज्ञा की ओर संकेत करता है तो वह संकेतवाचक विशेषण हो जाता है। कउन धान लइ आये हया (कौन सी धान ले आये हो), कबय से गइया भूखी हय (गाय कब से भूखी है) कउन-कउन लरिका भाग गे हँय (कौन-कौन से लड़के भाग गये हैं) यहाँ कउन धान, कबय से गइया, कउन-कउन लरिका संकेत वाचक विशेषण है।

एक वचन

उ.पु.	**म.पु.**	**अन्य पुरूष**
मोर/आपन	तोर/तोहार	उनकर/उनखर
मोहूँ का	तोहूँ का	उनहूँ का

मोका	तोका	उनका/उनखा
मँय	तँय	उँइ
हम	तुम	उँइ
हमका	तुमका	उनका
हमार	तोहार	उनकर/उनखर
हमहीं	तोही	उनहीं

बहुवचन

उ.पु.	म.पु.	अन्य पुरूष
हमहीं पचन/पंचन	तुमही पचन/पंचन	उनहीं पचन/पंचन
आपन पचन	तोहार पचन	उनकर/उनखर पचन
हम पंचे	तुम पंचे	उँइ पंचे
हमार पचन	तोहार पचन	उनकर/उनखर पचन
हमका पंचन/पचन	तुमका पंचन/पचन	उनका/उनखा पचन/पंचन
अपने पचन का	तोहई पचन का	उनहीं पचन का

सर्वनाम कारक रूपान्तर तालिका

सर्वनाम	कर्त्ता	कर्म	करण	सम्प्रदान	अपादान	संबंध	अधिकरण
हम	हम	हमका	हमसे	हमका	हमसे	हमार	हमरे पर
तुम	तुम	तुमका	तुमसे	तुमका	तोहसे	तोहार	तोहरे पर
अपना	अपना	अपना का	अपना से	अपना का	अपना से	आपन	अपना पर
मँय	मँय	मोका	मोसे	मोका	मोसे	मोर	मोरे पर
उँइ	उँइ	उनका	उनसे	उनका	ओसे	उनखर	उनकें पर
उआ	उआ	ओका	ओसे	उनका	ओसे	ओकर	उनपर

विशेषण

जिन शब्दों से संज्ञा या सर्वनाम की विशेषता प्रगट होती है, उन्हें विशेषण कहते हैं। जैसे मीठ, आमा, गोल खरबूजा, लमहर, पूँछ आदि। दिये गये वाक्यों में आमा, खरबूजा, पूँछ संज्ञा हैं तथा मीठ (मीठा) गोल (गोल) लमहर (लम्बी) शब्द विशेषण हैं, जो साथ में प्रयुक्त संज्ञा शब्दों की विशेषता बतला रहे हैं, इसलिए विशेषण है। कलुआ, ऊँच, टेढ़, चाकल, दहपोंग, चोंघट, लमतूतुर, गइताल, पोहगर, सगला, आमिल, गुरुतुल, चोख, निकहा, घिनहा, तोखार, गंधइला,

मोट, उजियार, चिमिरखा, निछंगा, थानमनंगा, अँधियार, थोर आदि बघेली के प्रमुख विशेषण हैं। (कलुआ व्यक्ति वाचक भी हो जाता है)

विशेषण के प्रकार :-

(1) गुणवाचक विशेषण :- वे शब्द जो व्यक्ति या वस्तु के गुण, रूप, रंग, दशा, आकार, एवं कला की विशेषता बतलाते हैं, उन्हें गुण वाचक विशेषण के नाम से जाना जाता है, जैसे वाखर दाँत चमकत हँय (उसके दाँत चमकते हैं) उआ नदी/नदिया चउड़ी हय (वह नदी चौड़ी है) सुदामा के खेत केर माटी ललछर ही (सुदामा के खेत की मिट्टी लाल है) यहाँ वाखर, उआ, सर्वनाम ृाब्द तथा दाँत, नदी, खेत एवं माटी संज्ञा शब्द है, जिनका गुण क्रमशः चमकना, आकार, चौड़ा एवं रंग लाल है इसलिए ये गुणवाचक विशेषण हैं।

(2) परिमाप वाचक विशेषण :- वे शब्द जो संज्ञा या सर्वनाम की नाप-तौल सम्बन्धी विशेषताओं का बोध कराते हैं, उन्हें परिमाप वाचक विशेषण के नाम से जाना जाता है। यथा-धोतिया तीन हाँथ लम्बी हय, (धोती तीन हाँथ लम्बी है) दुइ किलो दूध फटिगा हय (दो किलो दूध फट गया है) थोरका निकहा आमा धरे हँय (थोड़े से अच्छे, आम रखे हैं) आदि। परिमाप वाचक विशेषण के दो भाग माने जाते हैं-

(क) निश्चित परिमाप वाचक :- वे शब्द जो संज्ञा या सर्वनाम की निश्चित नाप तौल का बोध कराते हैं, उन्हें निश्चित परिमाप वाचक विशेषण के नाम से जाना जाता है। यथा-एक हाँथ लम्बा वन्हा हय (एक हाँथ लम्बा कपड़ा है) तीन सेर निकहा दूध लइ आबा, (तीन सेर अच्छा दूध ले आओ) दुइ गंडा पके आमा मिले हँय (दस पके आम मिले हैं) आदि।

(ख) अनिश्चित परिमाप वाचक :-वे शब्द जो सज्ञा या सर्वनाम की अनिश्चित नाप तौल का बोध कराते हैं, उन्हें अनिश्चित परिमाप वाचक विशेषण के नाम से जाना जाता है। यथा-थोड़ का पानी, (थोड़ा सा पानी) कुंछ उँचाई मा टाँगे गरम वन्हा (कुछ उँचाई में टँगे गर्म कपड़े) खूब आमिल आमा (बहुत खट्टा आमा) आदि।

(3) संख्यावाचक विशेषण :- जो शब्द संज्ञा या सर्वनाम की निश्चित या अनिश्चित संख्या या क्रम को बोध कराते हैं उन्हें, संख्यावाचक विशेषण कहा जाता है। यथा-दूसर (दूसरा) तिसरा (तीसरा) सतमाँ (सातवाँ) बहुत (अधिक) थोड़ (कम) थोड़ा आदि। संख्यावाचक विशेषण के दो प्रकार होते हैं :-

(क) निश्चित सख्या वाचक विशेषण :- जो विशेषणशब्द निश्चितता की अभिव्यक्ति करते हैं वे निश्चित संख्यावाचक विशेषण कहलाते हैं यथा-दुइठे (दो) चार ठे (चार) पाँचमाँ (पाँचवाँ) बरहमाँ (बारहवाँ) आदि। यथा-आमा केर पेड़ चार फुट लम्बा हय (आम का पेड़ चार फुट लम्बा है) राहा मा चार ठे उज्जर गाड़र बइठ हईं (खलिहान में चार सफेद भेड़ बैठी है)

(ख) अनिश्चित संख्या वाचक विशेषण :- जो विशेषण शब्द अनिश्चित संख्या

की अभिव्यक्ति करते हैं वे अनिश्चित संख्या वाचक विशेषण कहलाते हैं। यथा-निंचका (थोड़ा सा) चुनू का (थोड़ा सा) बहुत लक (बहुत अधिक) सबहिन (सभी) थोर-थोर (थोड़ा-थोड़ा) आदि। यथा- बरदा केर रंग थोर-थोर मटमइला हय (बैल का रंग थोड़ा-थोड़ा मटमैला है) चिहूँटी निंच बुदी होत ही (चींटी बहुत छोटी होती है) आदि।

(4) संकेत वाचक विशेषण :-वे सर्वनाम शब्द जो संज्ञा शब्दों की ओर संकेत करते हैं, संकेत वाचक विशेषण कहलाते हैं। यथा-इया छेरी का हरियर पत्ती डार दूया (इस बकरी को हरी पत्ती डाल दो) उआ मोटकबा पेड़ केतने मा मिली (वह मोटा पेड़ कितने में मिलेगा) आदि।

(5) सार्वनामिक विशेषण :- जो विशे-ाण सर्वनाम शब्दों से बने होते हैं, वे सार्वनामिक विशेषण कहलाते हैं। यथा-कउन बड़ी चिरइया (कौन सी बड़ी चिड़िया) कइसन मोट मनई (कैसा मोटा आदमी) अइसन छरहर मनई (ऐसा दुवला पतला आदमी)

(6) संबंध वाचक विशेषण :- जो संज्ञा या सर्वनाम शब्द संबंध की विशेषता को प्रकट करते हैं वे संबंधवाचक विशेषण कहलाते हैं। यथा- दसरथा केर लड़िका पोहगर हय (दसरथ का लड़का निपुण है) बघेलखण्ड केर बोली कुछ चरेर ही (बघेलखंड की बोली कुछ कठोर है)

कुछ बघेली विशेषण इस प्रकार है- लंठ (मूर्ख) भोदू (मूर्ख) चिपोंग (मूर्ख) चइल ओदार (अप्रिय भाषी) दहपोंग (हँसोड़) करियन (काला) उज्जर (सफेद) पिअर (पीला) हरियर (हरा) गइताल (आलसी) पोहगर (निपुण) तुलबुलिहा (जल्दबाज) अधमाधूह, अहिमक, जोरगर (बहुत अधिक) लम्मा (लम्बा) चउड़ा (चौड़ा) दूबर (दुबला) पातर (पतला) मोट (मोटा) आदि।

क्रिया

जिन शब्दों से कार्य के व्यवहार का बोध होता है, उसे क्रिया कहते हैं या जिससे किसी कार्य के होने का बोध होता है, उसे क्रिया कहते हैं। जैसे- गीता पढ़त ही (गीता पढ़ती है) सुबोध नहीं खेलय (सुबोध नहीं खेलता है) उआ रोवत हय (वह रोता है) आदि।

यहाँ पर क्रमशः पढ़ना, खेलना, एवं रोना कर्त्ता के व्यवहार का बोध कराते हैं या किसी कार्य के होने का बोध कराते हैं, इससे ये शब्द क्रिया है। क्रिया के दो भेद होते हैं।

01. सकर्मक क्रिया :- जिन क्रिया पदों में कर्त्ता के व्यवहार का फल कर्म पर पड़ता है उसे सकर्मक क्रिया कहते हैं। जैसे उआ बीही खात हय (वह अमरूद खाता है) सीता रामायन पढ़त ही (सीता रामायण पढ़ती है) रमेंस गइया चराबत हय (रमेश गाय चराता है) इन वाक्यों में खाना, पढ़ना एवं चराना क्रिया पद है, जिसके कर्त्ता क्रमशः वह सीता तथा रमेश है, तथा अमरूद, रामायण एवं गाय कर्म है। सकर्मक क्रिया में निश्चय ध्वनित होता है।

02. अकर्मक क्रिया :- जिन क्रियापदों में क्रिया के व्यापार का फल कर्त्ता पर पड़ता है उसे अकर्मक क्रिया कहते हैं। अकर्मक क्रिया के साथ कर्म नहीं होता, अपितु क्रिया ही कर्म का कार्य

करती है। जैसे गीता दउड़त ही (गीता दौड़ती है) उआ गाबत हय (वह गाता है) बिसनथवा हंसत हय (विश्वनाथ हँसता है) आदि । उपर्युक्त वाक्यों में दौड़ना, गाना, हँसना, क्रिया का बोध कराते हैं, जिनका फल क्रमशः गीता, वह तथा विश्वनाथ पर पड़ता है, जो वाक्यों में कर्त्ता का कार्य कर रहे हैं।

बघेली में क्रिया के पूर्व का, केही, शब्द लगाने पर यदि उत्तर आता है तो क्रिया सकर्मक होगी, यदि नहीं आता है तो क्रिया अकर्मक होगी । अकर्मक क्रिया में उत्तर नहीं मिलता तथा अनिश्चय ध्वनित होता है।

बघेली क्रियाएँ		**हिन्दी क्रियाएँ**	
एक वचन	बहुवचन	एक वचन	बहुवचन
आवत हय	आवत हँय	आता है	आते हैं
जात हय	जात हँय	जाता है	जाते हैं।
दउड़त हय	दउड़त हँय	दौड़ता है	दौड़ते हैं
खेलत हय	खेलत हँय	खेलता है	खेलता है
हँसत हय	हसत हँय	हँसता है	हँसते हैं।
खात हय	खात हँय	खाता है	खाते हैं
रोबत हय	रोबत हँय	रोता है	रोते हैं।

नोट :- कहीं कहीं थ् ह के साथ मिलकर प्रयुक्त होता है। यथा-आवत थ्हें (आते हैं) सतना की तरफ (थ्हें) आदर सूचक शब्दों के साथ प्रयोग में लाया जाता है।

क्रिया के पद

1) द्विकर्मक क्रिया, 2) संयुक्त क्रिया, 3) पूर्णकालिक क्रिया, 4) प्रेरणार्थक क्रिया, 5) नाम धातु क्रिया, 7) सजातीय क्रिया, 8) पूर्ण और अपूर्ण क्रिया।

(1) द्विकर्मक क्रिया :- जिन क्रिया पदों में दो कर्म पाये जाते हैं वे द्विकर्मक क्रिया वाले पद कहलाते हैं। यथा-हम वाखा दुइठे आमा दीन (हमने उसको दो आम दिये) गउरी बिमला का वन्हा खरीदिस । (गौरी ने विमला को कपड़ा खरीदा)

पहले वाक्य में का दीन (क्या दिया) प्रश्न करने पर उत्तर मिला-आमा दीन (आम दिये) काखा दीन (किसको दिया) प्रश्न करने पर उत्तर मिला वाखा (उसको) इसी तरह दूसरे वाक्य में का खरीदिस (क्या खरीदा) प्रश्न करने पर उत्तर मिला वन्हा (कपड़ा) काखा खरीदिस (किसको खरीदा) प्रश्न करने पर उत्तर मिला विमला का (विमला को) अतः पहले वाक्य में आम एवं दूसरे वाक्य में कपड़ा मुख्य कर्म हुआ तथा पहले वाक्य में उसको एवं दूसरे वाक्य में विमला को गौण कर्म हुआ ।

(2) संयुक्त क्रिया :- ऐसे क्रिया पद जो दो क्रियाओं के मेंल से अथवा कृदंत और क्रिया के योग से या संज्ञा और क्रिया के योग से या विशेषण और क्रिया के योग से तैयार होते हैं, संयुक्त क्रिया कहलाते हैं । यथा-

1:- कृदंत और क्रिया के मेंल से बने क्रिया पद -
चले अउब (चले आना) गिर पड़ब (गिर पड़ना) निकर जाव (निकल जाना) आदि ।

2:- संज्ञा और क्रिया के मेंल से बने क्रिया पद -
पढ़ाई करब (पढ़ाई करना), बड़प्पन होब (बड़प्पन होना), रइदास बनब (रैदास बनना) आदि

3:- विशेषण और क्रिया के मेंल से बने क्रिया पद
चहड़ार होब (उदण्ड होना) करिया होब (काला होना) हरियर होइगा (हरा हो गया)

4:- दो क्रियाओं के मेंल से बने क्रिया पद -
चलब-फिरब, (चलना फिरना) आउब-जाब,(आना जाना) खेलब-कूदब (खेलना कूदना) आदि ।

(3) पूर्वकालिक क्रिया :- यदि एक क्रिया के बाद दूसरी क्रिया आये या कर्त्ता के पहले एक क्रिया तथा कर्त्ता के बाद दूसरी क्रिया आये तब पूर्वकालिक क्रियाओं में 'के' प्रत्यय जोड़ देने पर जो वाक्य बनता है उसे पूर्णकालिक क्रिया कहते हैं।

यथा- 1:- हम खाना खायके लउटब (हम खाना खाकर लौटेंगे)
2:- उआ सरबत पीके अई । (वह शरबत पीकर आयेगा)
3:- रमेंस काम पूर कइके जई । (रमेश कार्य पूर्ण करके जायेगा)
4:- खाये के बाद हम जाब । (खाने के बाद हम जायेंगे)
5:- हम खाय के लउटब (हम खाने के बाद लौटेगे)
यहाँ रेखाकिंत शब्द पूर्णकालिक क्रियायें हैं।

(4) प्रेरणार्थक क्रिया :- वे क्रिया पद जिससे प्रेरणा का बोध होता है, प्रेरणापद क्रियाएँ कहलाती हैं। इस क्रिया में कर्त्ता क्रिया स्वयं नहीं करता है, बल्कि दूसरे से करवाता है अथवा किसी को प्रयत्न करने के लिये प्रेरित करता है। ऐसी स्थिति में क्रियाएँ प्रेरणार्थक क्रियाएँ कही जाती हैं।

यथा- 1- उआ धोबी से बन्हा साफ करवावत हय। (वह धोबी से कपड़ा साफ करवाता है)
2- महेस हरबाह से गाबर उठवावत हय। (महेश मजदूर से गोवर उठबाता है)
3- गीता, माधुरी से रजाई सियाबत ही । (गीता माधुरी से रजाई सिलवाती है)
यहाँ रेखाकिंत शब्द प्रेरणार्थक क्रिया पदों के उदाहरण हैं।

(5) नाम धातु क्रिया :- जो क्रियाएँ संज्ञा शब्दों में प्रत्यय लगाकर बनाई जाती है वे नाम

धातु क्रिया कहलाती हैं । यथा -

संज्ञापद	उससे बनने वाली क्रियाएँ
डिर	डेराब
लिखाई	लिखब
लड़ाई	लड़ब
हँसाई	हँसब

(6)सजातीय क्रिया :- जिस वाक्य में कर्म और क्रिया एक ही धातु से बने होते हैं वहाँ सजातीय क्रिया पद होता है -

यथा- राकेस खेल, खेलिस, अमन सिढ़िया के चढ़ाई चढ़िस। उआ खूब हँसी-हँसिस। खाज-खजआउब। लेख-लिखब। कमाई-कमाब। गमाई-गमाउब। मोटाई-मोटबाउब। उतार-उतारब। पानी-पिअब। खाना-खाब आदि।

यहाँ खेल खेलना, चढ़ाई चढ़ना, हँसी-हँसना आदि एक धातु से बने पद हैं इसलिये सजातीय क्रिया हैं।

(7)पूर्ण और अपूर्ण क्रिया :- वह क्रियापद जिससे पूर्ण बात का बोध होता है पूर्ण क्रिया कहलाती है तथा जिससे पूर्ण बात का बोध नहीं होता वह अपूर्ण क्रिया कहलाती है। इसके चार भेद हैं-

1:- सकर्मक पूर्ण क्रिया - उआ सकारे दउड़त हय । (वह सुबह दौड़ता है)
2:- सकर्मक अपूर्ण क्रिया- उआ वाँखर बाप आय । (वह उसका पिता है)
3:- अकर्मक पूर्ण क्रिया - रामाधीन पढ़त हय । (रामाधीन पढ़ता है)
4:- अकर्मक अपूर्ण क्रिया- उआ पढ़त रहत हय । (वह पढ़ता रहता है)

वे शब्द जो अपूर्ण क्रिया के अर्थ की पूर्ण अभिव्यक्ति को पूर्ण करते हैं, पूरक शब्द कहलाते हैं। अपूर्ण सकर्मक क्रिया के पूरक कर्म पूरक कहे जाते हैं तथा अपूर्ण अकर्मक के पूरक शब्द कर्तृ पूरक कहे जाते हैं। कर्म पूरक में कर्म सदैव कर्त्ता से अलग होता है तथा कर्तृपूरक में अभिन्न अंग होता है।

क्रिया का पद परिचय :- क्रिया के पद परिचय हेतु निम्नांकित बिन्दुओं पर ध्यान देना आवश्यक है -

1.क्रिया के भेद, 2.वाच्य, 3.काल, 4.लिंग, 5.वचन, 6.पुरु-ा, 7.कारक से सम्बन्ध ।

जैसे- उआ बइठ हय ।

बइठ हय- अकर्मक क्रिया, कर्तृवाच्य, सामान्य वर्तमान काल पुलिंग एक वचन, अन्य पुरुष, इसका कर्त्ता उआ (वह) है।

बघेली शब्दों में विकारी परिवर्तन

व्यक्ति वाचक संज्ञा	जाति वाचक संज्ञा	सर्वनाम	विशेषण	क्रिया	भाव वाचक संज्ञा
जदु	जदुबंशी	–	जदुबंस	–	जदुत्व
रघु	रघुबंशी	–	रघुबंस	–	रघुत्व
किरिस्न	किरिस्नबंसी	–	किरिस्नबंस	–	किस्नत्व किरिस्नपन
रइदास	रइदास	–	रइदासी	–	रइदासपन
महगुआँ	–	–	महँगा	महँगी	मँहगाई
–	–	आपन	–	अपनाउब	अपनपव
–	–	हमार	–	–	हमारपन
–	–	तोही/ तोहार	तुहिन	–	तोरपन/
बड़कबा	–	–	बड़ा	बड़बड़ाब	बड़प्पन/बड़किया
–	–	–	डिरपोक	ड्यराब/ ड्यरान	डेरपोकन
जंगलिया	जंगल	–	जंगली	जंगलियाना	जंगलीपन
–	–	–	पढ़इया	पढ़ब	पढ़ाई
–	–	–	लड़ाकू	लड़ब	लड़इया
–	–	–	मीठ	मीठहोब	मिठास
–	–	–	हँसोड़	हँसब	हँसी
–	–	–	चिड़चिड़ा	चिड़चिड़ाब	चिड़चिड़ाहट/ चिड़चिड़ापन
–	–	–	थकबाह	थकब	थकावट
बइकलबा	बइकल	–	बइकल	बइकलाना	बइकलई/ बइकलाहट
गोरुहबा	गोरू	–	गोरुआर	गोरुआरी	गोरुअउँह/ गोरुअऊँ
	बाम्हन	–	बम्हनहटी	बम्हनाब	बम्हनई
कुटनहबा	कुटना	–	कुटना	कूटब	कुटनई/ कुटनपन

अध्याय 2

अव्यय

अबिकारी शब्द

अव्यय :- जिन शब्दों में किसी भी स्थिति में लिंग, वचन एवं कारक के कारण कोई भी प्रभाव नहीं पड़ता है या जो प्रत्येक स्थिति में समान रहते हैं, वे अविकारी या अव्यय कहलाते हैं। जैसे- आज, सबहिन, जद्दपि, धत आदि। अव्यय के चार भेद है।

क्रिया विशेषण

जो शब्द क्रिया की विशेषता बतलाते है वे क्रिया विशेषण कहलाते हैं- तेज दउड़ब (तेज दौड़ना) धीरे हीठब (धीरे चलना) हरबी आउब (जल्दी आना) जल्दी उठब (जल्दी उठना) धीमें-धीमें बोलब (धीरे-धीरे बोलना) आदि । खखस खाइस (गहराई से काटना)

नोट:- विशेषण संज्ञा या सर्वनाम शब्दों की विशेषता बतलाते हैं। जैसे- राम केर घोड़ तेज हय (राम का घोड़ा तेज है) में तेज शब्द विशेषण है; जो घोड़ा संज्ञा शब्द की विशेषता बतला रहा है यदि इस वाक्य में थोड़ा सा परिवर्तन करके इस तरह कहें कि राम केर घोड़ हरबी दउड़त हय (राम का घोड़ा तेज दौड़ता है-में जो तेज विशेषण शब्द है, वह ''दौड़ना' क्रिया शब्द की विशेषता बतला रहा है; इसलिए तेज दौड़ना क्रिया विशेषण हुआ।

क्रिया विशेषण के प्रकार -

(क) अविकारी क्रिया विशेषण-		(ख) कालवाची क्रिया विशेषण	
बघेली	हिन्दी	बघेली	हिन्दी
हाँथय-हाँथ	हाँथो-हाँथ	अबहिन	अभी
ठीकइ-ठीक	ठीक-ठीक	जबहिन	जभी
कबहूँ-जबहूँ	कभी-जभी	तबय	तभी
कबहूँ-कबहूँ	कभी-कभी	तबहिन	तभी
एक-एक कइके	एक-एक करके	जबय	जब

(ग) स्थानवाची क्रिया विशेषण **(घ) दिशावाची क्रिया विशेषण**

इहाँ	यहाँ	इहँन	इधर
उहाँ	वहाँ	उहँन	उधर
कहब	कहीं	इआ कइती	इस तरफ
जहँय	जहाँ	एँकई-एँहकई	इधर
तहँय	तहाँ	ओंकई-ओहँकई	उधर
एँ	कइती	इस	तरफ
ओं	कइती	उस	तरफ

(ङ.) परिणामवाची क्रिया विशेषण :-

एतना	इतना
ओतना	उतना
केतना	कितना
एत्ता	इतना
जेत्ता	जितना
तेत्ता	उतना

2- संबंध बोधक अव्यय

जिन शब्दों के द्वारा संज्ञा या सर्वनाम शब्दों का अन्य शब्दों के साथ संबंध प्रकट होता है, उन्हें संबंध बोधक अव्यय कहते हैं। यथा- तोहरे बिना (तुम्हारे बिना) ओखे अलाबा (उसके सिबाय) हमरे जइसन या हमरे किनाई (हमारे समान) तोहरे जइसन (तुम्हारे जैसा) ओखे जइसन (उसके जैसा) लछिमन समेंत (लक्ष्मण सहित) अपना के बदउलत (आपके कारण) हमरे खातिर (हमारे लिये) तुम्हारे खातिर (तुम्हारे लिये) रमई के नेरे (राम के पास) आदि। यहाँ बिना, अलावा, जइसन, समेंत, बदउलत, खातिर, बादिर, नेरे, आदि संबंध बोधक अव्यय है, जो संज्ञा या सर्वनाम शब्दों के साथ प्रयुक्त हुए हैं। इसके भेद निम्न हैं।

(क) काल वाचक - बाद मा, पहले, अबहिनय, अबय, तबहिनय, तबहिन आदि।

(ख) स्थान वाचक- आगे, पाछे, नेरे, दाएँ, बाँए, खाले-कइती आदि।

(ग) साघन वाचक - हाँथय-हाँथ, हाँथय, हाँथ आदि।

(घ) निमित्त वाचक - कारन, लाने, वास्ते, वादे, खातिर, वादिर आदि।

(ङ.) साम्य वाचक - हू-बहू, नाई, ओइसनय, ओहिनतर, जइसन।

(च) प्रकोर्णक - बिना, विरोधमा, साथ, बारेमा आदि।

समुच्चय बोधक अव्यय

जो शब्द दो या दो से अधिक शब्दों, वाक्यांशों एवं वाक्यों आदि को परस्पर जोड़ते हैं और अलग करते हैं, उन्हें समुच्चय बोधक अव्यय कहते हैं जैसे अउर, फेर, फिर, पर आदि । समुच्चय बोधक अव्यय को दो भागो में विभाजित किया जा सकता है-

(अ) संयोजक - जो अव्यय शब्दों को परस्पर जोड़ने का कार्य करते हैं; उन्हें संयोजक कहा जाता है। यथा-फेर, अउर, फिर, त, पुनिके आदिजो तोहरे खेत मां तिल बोबा होत त अच्छी पइदाबार होत (यदि तुम्हारे खेत में पुनः तिल बोया होता तो अच्छी पैदावार होती । किसन फेर के लउटि आबा (किसन फिर से लौट आया) हम अउर तँय साथय बजार जाब (हम और तुम एक साथ बाजार जायेंगे) आदि।

(ब) विभाजक- जो अव्यय शब्दों को अलग करते है, वे विभाजक कहलाते है। यथा- पय, बरना, नहीं त आदि। हम पढ़ित पय किताब नहिं आय (हम पढ़ते परन्तु पुस्तक नहीं हैं) साँप का मारय का रहा हय पय लाठिन नहिं आय (सर्प को मारना था; परन्तु लट्ठ नहीं है) इहाँ से टरिजा नही त झगड़ा होइ जई (यहाँ से दूर हो जाओ वरना लड़ाई जो जायेगी)

विस्मयादि बोधक अव्यय

विस्मयादिवोधक अव्यय वे अव्यय हैं जो विस्मय, हर्ष, शोक, घृणा, क्रोध, लज्जा, स्वीकृति आदि भावों को प्रगट करते हैं यथा- ओहो! आहा! आह! कसो! बापरे! मोरबप्पा! अइसन! का करी! ऊहूँ! अरारररे! धन्य हय! मरिगयन! रुकिजा! बाह रे! नहो! का कहूया! आदि।

(क) बिस्मय :- आह! ओह! अहा! आँय! ऐं! अरारररे आदि।
अरे! पइसा मिलिगा। (अहो! पैसा मिल गया)
आँय! हरबी आय गया।(अच्छा जल्दी आ गये)
अहा! मजा आयगा। (ओह! आनन्द आ गया)
हायरे! मरि गयन दउड़ा! (हायरे! मर गया दौड़ो)

(ख) हर्ष-- आहा! बाह-बाह! का कही! धन्य है? आदि ।
ओहो! केतना मीठ आमा हय। (अहा! कितना मीठा आम है)
बाह-बाह! अइन मउके मा आय गया। (बाह-बाह ऐन वक्त पर आ गये)
धन्य है! लरिका का डूबय से बचाय लिहा। (धन्य है! लड़के को डूबने से बचा लिया)

(ग) सोक (शोक) हाय! हाय-हाय! आह! उफ !
हाय-हाय! गइया मरिगय (हा! हा! गाय मर गई)
हाय-हाय! सलगा राहा जरिगा।(हा! हा! पूरा खलिहान जल गया)
राम-राम! उनके घर मा चोरी होइ गय। (राम-राम! उनके घर में चोरी हो गई)

(घ) घिना (घृणा) थू!थू!!थू!!! छीं! छीं!! धिक्कार है।
थू-थू! केतनी गन्दगी हय। (थू-थू! कितनी गन्दगी है।)
छीं-छीं! नाली मा कीरा परे हँय। (छिःछिः! नाली में कीड़े पड़े हैं)
छी-छी! ओखा उल्टी होइ गय (छिः छिः उसको कै हो गया)

(ड.) क्रोध - चुप! हट! टर! आव! आदि ।
चुप! अब बोले ना। (चुप! अब बोलना मत)
आव! ता बताई। (आओ तो बताएँ)
टर! हमरे आँखिन से अउलट होइजा। (टरो ! हमारे आँखो से दूर हो जाओ)

(च) लज्जा - छी-छी! छी! हाय मरेन आदि ।
छी-छी! नाक त कटवाय लिहा। (छिः छिः! नाक तो कटा ली)
छी! अठमा आय फेल होइगया। (छिः आठवीं फेल हो गये)
हाय रे! मरेन हम पय तुम हमहीं कउनो काम के नहीं रहँय दिहा। (हाय ! मैं मरा पर तुमने हमें किसी काम लायक नहीं रहने दिया)

(छ) स्वीकृति- हूँ-हूँ-हूँ! जी हाँ! ठीक हय! ठीक हय जी! हाँ जी! जी-जी! आदि
जी! अबहिन अइत हयन। (जी! अभी आता हूँ)
जी हाँ। काम पूरा होइगा (जी हाँ! कार्य पूर्ण हो गया)
ठीक हय! अबे कुछू नहीं नसान। (ठीक है अभी कुछ नहीं बिगड़ा)

(ज) भय- हाय-हाय हा! ओह! बापरे ! आदि।
बापरे! केतना अधियार हय। (बापरे! कितना अँधेरा है)
हाय! अब का करी। (हाय! अब क्या करें)
ओह! सनंका बीतत हय। (ओहः चारो तरफ सन्नाटा छाया है।)
भागा-भागा ! कूकुर खाय लिहिस। (भागो-भागो कुत्ता खा लेगा।)

अध्याय 3

उपसर्ग

जो शब्दांश मूल शब्द के पहले या पूर्व में जुड़कर उसके अर्थ को घटा बढ़ा या उल्टा कर देते है उन्हें उपसर्ग कहते हैं। बघेली के प्रमुख उपसर्ग है-

सन	-	सनमारग, सनतुष्ट, सनतोष
सु	-	सुमति, सुतंत्र, सुमारगी
कु	-	कुमारगी, कुठाहर, कुलच्छनी
अन	-	अनसोहत, अनबनित, अनगढ़न
अ	-	अजसी, अधरमी, अभागी
अप	-	अपजस, अपसगुन, अपमान
नि	-	निकम्मा, निठल्ला, निलज्ज
बिन	-	बिनखाये, बिन बइठे, बिन हींठे
दुर	-	दुरगुन, दुरगंध, दुरदसा
दुस	-	दुसकरम, दुसमन, दुसपरचार
उप	-	उपहास, उपबास, उपनाव, उपनाम
सह	-	सहनाव, सहयोग, सहभागी
अउ	-	अउगुन, अउतार, अउसर
पर	-	परदेस, परहित, परकाज
परि	-	परिहार, परिबार, परिनाम
उत	-	उतसाह, उतजोग, उतपात
अति	-	अतिग्यानी, अतिबल, अतिदुष्ट
अध	-	अधजरा, अधमरा, अधपका,
स	-	सबल, सजल, सहज
बि	-	बियोग, बिवाद, बिछोह
गैर	-	गैरपढ़े, गैरलिखे, गैरचले

ला	-	लाबारिस, लापरवाह, लाइलाज
हर	-	हरमनई, हरदिन, हरदेउता,
बिगुर	-	बिगुरगये, बिगुरसमझे, बिगुरजाने ।

प्रत्यय

जो शब्द या शब्दांश अंत में उनसे जुड़कर इनके अर्थ को बदल देते हैं, या बढ़ा देते हैं, उन्हें प्रत्यय कहते हैं।

प्रत्यय के दो भेद हैं-

कृत प्रत्यय :- जो प्रत्यय क्रियाओं के बाद में जुड़कर उनके अर्थ को बदल देते हैं उन्हें कृत प्रत्यय कहते हैं। क्रियाओं के बाद में जुड़ने के कारण उन्हें कृदंत प्रत्यय कहते हैं। कृदंत प्रत्यय के पाँच भेद हैं।

प्रत्यय वर्गीकरण

कृदंत	तद्धित
1- कर्तृवाचक	1- कर्तृवाचक
2- कर्मवाचक	2- भाव वाचक
3- करण वाचक	3- गुण वाचक
4- क्रिया वाचक	4- न्यूनतावाचक
5- भाव वाचक	5- स्त्रीवाचक

(1) **कृदंत** :- (1) कर्तृवाचक- ऐसे प्रत्यय जिनसे "कर्त्ता ही काम करने वाला है" की जानकारी होती है, उन्हें कर्तृवाचक प्रत्यय कहते हैं। अधिकांशतः ये अइया, वाला, अक्कड़, आऊ, आता आदि के मिलने से बनते हैं। यथा-

अइया	-	हंसइया, रोबइया, नचइया
बाला	-	चलयबाला, रोमयबाला, खायबाला ।
अक्कड़	-	पियक्कड़, सोबक्कड़, खबक्कड़
आऊ	-	घुमाऊ, टिकाऊ, उबाऊ
आसा	-	लड़ासा, सोबासा, खेलासा

(2) **कर्मवाचक** :- ऐसे प्रत्यय जिनसे कर्म के आधीन ही क्रिया होती है, उन्हें कर्मवाचक कृदंत प्रत्यय कहते हैं। अधिकांशतया ये, ना, नी, के योग से बनते हैं। यथा-

करना +	ई	=	करनी
मरना +	ई	=	मरनी
गढ़ना +	ई	=	गढ़नी
बेचना +	ई	=	बेचनी

(3) **करणवाचक** :- ऐसे प्रत्यय जिनसे क्रिया करने वाले की जानकारी होती है, उन्हें करण वाचक प्रत्यय कहते हैं। अर्थात् क्रिया किसके द्वारा की जाती है, इसका पता चले, उन्हें करण वाचक प्रत्यय कहते हैं । यथा-

काम से कमाई
धोबी से धोबाई, चोर से चोरी
नाक से नकनकाब, फन से फनफनाब़
दाँत से दँतनिपोरी, टंटपाल से टंटपाली
खीस से खिसनिपोरी, चरबाह से चराई ।

(4) **क्रियावाचक** :- ऐसे प्रत्यय जिनसे क्रिया की जानकारी होती है; उन्हें क्रियावाचक प्रत्यय कहते हैं। यथा-

हबय - आबत हबय, फुर्सत हबय, फुसुर्रत हबय, टेपुर्रत हबय।
अउब - चले अउब, लउटि अउब, नअउब, बहुरि अउब।
ई - भरी, जरी, करी, टरी।
गा हय - लउटगा हय, रिसायगा हय, हेरायगा हय।
कीन - जरतकीन, फरतकीन, गिरतकीन।
दिहिस - ढोस दिहिस, छुइ दिहिस, बेलमाय दिहिस।
लिहिस - पाय लिहिस, सुत्ताय लिहिस, खभुआय लिहिस।
जाब - घूमत जाब, रुकत जाब, टोहत जाब।
आन - हेरान, झुरान, गुनगुनान।

(5) **भाववाचक** :- ऐसे प्रत्यय जिनसे क्रिया के भाव व्यापार या रूप की जानकारी होती है, उन्हें भाव वाचक प्रत्यय कहते हैं। वाला तद्धति प्रत्यय है; किन्तु जब वह क्रिया के बाद में जुड़ता है तो कृदंत हो जाता है। तद्धति के साथ मिलाकर लिखा जाता है, लेकिन कृदंत के साथ अलग-अलग लिखा जाता है। यथा-

आहट- गुदगुदाहट, खरखराहट, चरचराहट।
आउब- बहटिआउब, पहिनाउब, खेलाउब।
आई - मिजाई, गहाई, उड़बाई।
आन - उड़ान, थकान, दउड़ान।
आबट- रुकाबट, थकाबट, मिलाबट।
आबा - पछिताबा, समझाबा, अपनाबा।
इहा - लउटिहा, जइहा, खइहा।
बाला - सकेलय बाला, बाँधय बाला, उकेलय बाला।
आरी - खेलारी, अनारी, तीसमारी।
अई - अई, खई, नहई।
बइया - सकेलबइया, हँसबइया बइठबइया।

(2) **तद्धति प्रत्यय** :- जो प्रत्यय संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण एवं क्रिया विशेषण शब्दों के बाद में जुड़कर उनके अर्थ को बदल देते हैं, उन्हें तद्धति प्रत्यय कहते हैं। तद्धति प्रत्यय के बघेली में पाँच भेद हैं-

(1) कर्तृवाचक :- ऐसे प्रत्यय जिसे कर्त्ता या कार्य करने वाले की जानकारी होती है, उन्हें कर्तृवाचक प्रत्यय कहते हैं।

यथा- बाला - दहिउबाला, घिउबाला, भड़बाबाला।
इया - तेलिया, बनिया, कछिया।
आर - सोनार, लोहार, कोहार आदि।
आइन - सेठाइन, चउबाइन, सुकलाइन।
इन - सोनारिन, कहारिन, लोहारिन।

(2) **भाववाचक** :- ऐसे प्रत्यय जिनसे किसी प्रकार के भाव की जानकारी होती है, उन्हें भाव वाचक प्रत्यय कहते हैं। यथा -

आई - खटाई, मोटाई, चोखाई।
हट - कुरुकुराहट, मुस्कुराहट, फनफनाहट।
आन - उँचान, घमान, भुखान।
आपा - बुढ़ापा, मोटापा, रंड़ाँपा।
बाला - आपनबाला, करियनबाला, उनखरबाला।
इहा - गमइहा, सहरहा, पहरहा।
ई - ग्यानी, दानी, अपनाई।
पन - बड़प्पन, लड़कपन, पियरपन।
उट - बघउट, मघउट।
आइस - ठकुराइस, रजाइस, बम्हनाइस।
पन - अपनापन, अललपन, लड़कपन।
अई - गमरई, लुच्चई, बड़कई।
अरई - लइमरई, पोहगरई, लउधरई।

(3) **गुणवाचक** :- ऐसे प्रत्यय जिनसे किसी प्रकार के गुण की जानकारी होती है, उन्हें गुणवाचक प्रत्यय कहते हैं। यथा-

आ - भूखा, पियासा, लड़ासा।
ई - लोभी, बिरोधी, खेती।
बान - दरबान, मेंहरबान, सीलबान।
दारी - दुनियाँदारी, दुकानदारी, पट्टेदारी।
मान - गाड़ीमान, धनमान, ग्यानमान।
आका - कड़ाका, तड़ाका, भड़ाका।

नी - किसानी, जमानी, हयरानी।

दान - कन्यादान, जिउदान, गउदान, भुँइदान।

मन - दयामन, लजामन, झुरमन।

(4) **न्यूनतावाचक** :- ऐसे प्रत्यय जिनसे संज्ञाओं के छोटेपन की जानकारी होती है, उन्हें न्यूनतावाचक प्रत्यय कहते हैं। यथा-

इया - पहार-पहरिया, केमरा-केमरिया, पथरा-पथरिया।

ई - पोखरा-पोखरी, गगरा-गगरी, डेहरउटा-डेहरउटी।

आनी - जेठ-जेठानी, देबर-देवरानी, नउकर-नउकरानी।

ओई - बहन-बहनोई, ननद-ननदोई।

इन - सरपुत-सरपुतिन, बघेल-बघेलिन, कुरमी-कुरमिन।

आइन - पाड़े-पड़ाइन, चउबे-चउबाइन,ठाकुर-ठकुराइन, मद-मदाइन।

(5) **स्त्रीवाचक** :- ऐसे प्रत्यय जिनसे स्त्री जाति की जानकारी होती है, उन्हें स्त्रीवाचक प्रत्यय कहते हैं। यथा-

इया - बिटिया, लोहिया, खटिया।

आनी - जेठानी, देवरानी, नउकरानी।

ई - मोरइली, खरही, मिरगी।

इन - बाघिन, नागिन, लगुइन।

आइन - चेलाइन, गउतमाइन, ठकुराइन।

हाई - कुंदहाई, रमपुरहाई, देउरहाई।

बाली - बइरिहाबाली, बइजनाथबाली, तमराबाली।

इनियाँ - लछिमिनियाँ, तेलिनियाँ, कहनियाँ ।

इलिया - कउसिलिया, सतिलिया, जेठिलिया।

अध्याय 4

विलोम

विलोम (विरुद्धार्थी शब्द)

संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, क्रिया आदि के विपरीत अर्थ का बोध कराने वाले शब्दों को विलाम या (विपरार्थी) शब्द या उल्टा अर्थ वाले शब्द कहते हैं । यथा-

शब्द	विलोम शब्द	शब्द	विलोम शब्द
नीक	नागा	करम	कुकरम
सरग	नरक	नियाव	अन्नियाव
अँधियार	उजियार	निकहा	घिनहा
तात	जूड़	लइमर	पोहगर
आगी	पानी	आज	काल
बेउहर	भिखियारी	आउब	जाब
फुर	लबरी	रोउब	गाउव
मोट	पातर	उठब	बइठब
करू	मीठ	महँकब	गन्धाब
साह	चोर	ऊँच	नीच
जागब	सोउब	धरम	अधरम

लिंग

जिन शब्दों के द्वारा संज्ञा या सर्वनाम के पुरुष या स्त्री वाची होने का बोध होता है, उसे लिंग कहते हैं। बघेली में भी हिन्दी की तरह लिंग की अवधारणा प्रयोग पर आधारित है तथा लिंगों की संख्या दो है-

1- पुलिंग 2- स्त्रीलिंग

(क) पुलिंग :- जिन शब्दों से पुरुष जाति का बोध होता है, वे शब्द पुलिंग के अन्तर्गत आते हैं। यथा- सिवनाथ, आमा, बरदा, कूकुर आदि ।

(ख) स्त्रीलिंग :- जिन शब्दों से स्त्री जाति का बोध होता है, वे शब्द स्त्रीलिंग के अन्तर्गत आते हैं । यथा-सतिलिया, अमिली, गइया, आदि ।

पुलिंग से स्त्रीलिंग बनाने के नियम

(1) पुलिंग में 'इया' प्रत्यय जोड़कर-

पुलिंग	स्त्रीलिंग
बाँदर	बँदरिया
बिलार	बिलरिया
कूकुर	कुकुरिया

(2) पुलिंग में 'आनी' प्रत्यय जोड़कर

जेठ	जेठानी
देबर	देवरानी
पीती	पितिआनी

(3) पुलिंग में 'इन' प्रत्यय जोड़कर-

सरपुत	सरपुतिन
हरबाह	हरबाहिन
साँप	साँपिन
सिगटा	सिगटिन
बहनेउता	बहनेउतिन
चउहान	चउहानिन

(4) पुलिंग में 'ई' प्रत्यय जोड़कर-

चिहुँटा	चिहुँटी
निगहा	निगही
सुमरा	सुमरी
गदहा	गदही
मिरगा	मिरगी
काका	काकी
सिलउँटा	सिलउँटी
भइँसा	भइँसी
चउरा	चउरी

(5) पुलिंग में ओई प्रत्यय जोड़कर –

ननद	ननदोई
बहन	बहनोई

(6) पुलिंग में आइन प्रत्यय जोड़कर–

ठाकुर	ठकुराइन
गउतम	गउतमाइन
मुखिया	मुखियाइन

(7) पुलिंग में ऊ प्रत्यय जोड़कर–

पूत	पुतऊ
फुफा	फुफू

(8) पुलिंग में अवा के स्थान पर इया जोड़कर –

टोरबा	टोरिया
पड़बा	पड़िया
बछबा	बछिया
खोरबा	खोरिया
गहदेलबा	गहदेलिया

(9) पुलिंग में हज प्रत्यय जोड़कर –

सार	सरहज

(10) पुलिंग में ए के स्थान पर आइन जोड़कर–

पाड़े	पड़ाइन
दुबे	दुबाइन
चउबे	चउबाइन

(11) कुछ स्वतंत्र शब्द –

बाप	महतारी
बाबा	दाई
बरदा	गइया
मनसेरुआ	मेंहेरिया

ससुर	सास
पहुना	बिटिया
भइया	भउजी
देउता	देबी
लरिका	बिटिया

वचन

संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण, एवं क्रिया के जिस रूप से एक या अनेक का बोध होता है, उसे वचन कहा जाता है। बघेली में दो वचन होते हैं-

1- एक वचन :- संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण या क्रिया के जिस रूप से केवल एक का बोध होता है, उसे एक वचन कहा जाता है यथा-घोड़ (घोड़ा), मनई (मनुष्य), सिगटा (सियार), तोही (तुमका) इनहीं (इनको), लंठ (मूर्ख), आवत हय (आता है) आदि ।

2- बहुवचन :-संज्ञा, सर्वनाम, विशेषण या क्रिया के जिस रूप से एक से अधिक का बोध होता है, उसे बहुवचन कहा जाता है यथा-घोड़बन (घोड़ों), मनइन (मनुष्यों) सिगटन (सियारों) तुमही पंचन (तुम लोगों को) इनहीं पंचन (इन लोगों को) लंठन (मूर्खो) आबत हँय (आ रहे हैं) आदि।

बघेली में एक वचन से बहुबचन बनाने के लिये अधोलिखित नियमों का प्रचलन पाया जा रहा है।

		एकवचन	**बहुवचन**
1-	**अकारान्त में 'अन' प्रत्यय जोड़कर**	लात	लातन
		गइया	गइयन
		साधू	सधुअन
		खबइया	खबइयन
		गदहा	गदहन
		पहार	पहारन
2-	**शब्द के अन्त में 'इया' के स्थान पर इयाँ जोड़कर**	चिरइया	चिरइयाँ
		पिढ़इया	पिढ़इयाँ
3-	**अकारांत के आगे 'ओं' लगाकर**	मछरमार	मछरमारों
		गदहा	गदहों
		पहार	पहारों
4-	**सर्वनाम शब्दों के अन्त में 'पंचे' /पचे लगाकर**	तुम	तुम पंचे
		ई	ईं पंचे
		अपना	अपना पचे

5-	ईकारान्त शब्दों में इन लगाकर	मिढ्ढुली	मिढ्ढुलिन
		अमिली	अमिलिन
		बहनोई	बहनोइन
6-	अंत में 'बन' प्रत्यय जोड़कर	बाँदर	बँदरबन
		कूकुर	कुकरबन
		घोड़	घोड़बन
7-	क्रियापद 'हय' के स्थान पर हें लगाकर	आबत हय	आबत हें
		जात हय	जात हें
8-	क्रियापद हय के स्थान पर हँय लगाकर	दउड़त हय	दउड़त हँय
		रोबत हय	रोबत हँय
		सोबत हय	सोबत हँय
9-	संबंध बोधक एवं जातिवाचक पुलिंग में 'अन' लगाकर	मामा	मामन
		भतीज	भतीजन
		काका	काकन
		ठाकुर	ठकुरन
		बाम्हन	बम्हनन
10-	संबंध बोधक एवं जातिवाचक स्त्रीलिंग में 'इन' लगाकर	माँई	माँइन
		बहिनी	बहिनिन
		दाई	दाइन
		ठकुराइन	ठकुरइनिन
11-	अंत में 'एन' प्रत्यय जोड़कर	मूड़	मुड़ेन
		गोड़	गोड़ेन
		भइनें	भइनेंन
12-	अकारान्त में 'बे' लगाकर	च्वार	च्वरवे
		बाँदर	बँदरबे
		चंडाल	चंडलबे
13-	अंत में 'अउने/अउनेन प्रत्यय जोड़कर	चेलबा	चेलउने/चेलउनेन
		मिरगा	मिरगउने/मिरगउनेन
		साँप	सँपउने/सँपउनेन
		आमा	अमउने/अमउनेन

काल

क्रिया के होने के समय का बोध जिससे होता है, उसे काल कहते हैं। काल तीन प्रकार के होते हैं।

1:- **वर्तमान काल** :- प्रत्यक्ष समय को बोध कराने वाले को वर्तमान काल कहते हैं। जैसे-गीता दउड़त ही, हम काम करित हयन, पानी बरसत हय आदि। इसके निम्नलिखित भेद हैं।

(क) सामान्य वर्तमान काल :- जिससे सामान्य रूप से वर्तमान काल का बोध होता है, उसे सामान्य वर्तमान काल कहते हैं। यथा-गीता गाना गाबत ही, उँइ पंचे खेत जोतत हँय, मुरारी पढ़त हय आदि।

(ख) तात्कालिक (अपूर्व) वर्तमान काल :- जिससे क्रिया के जारी रहने का बोध होता है, उसे तात्कालिक वर्तमान काल कहते हैं। यथा- गीता गाना गाय रही हय, उँइं पंचे खेत जोतत लाग हँय, मुरारी पढ़त लाग हय आदि ।

(ग) संदिग्ध वर्तमान काल :- जिसमें क्रिया के चलते हुए कार्य पूर्ण होने में संदेह हो अथवा क्रिया तो चल रही हो; परन्तु उसका समय निश्चित न हो, उसे संदिग्ध वर्तमान काल कहते हैं। यथा-का गीता गाना गाबत होई? का उँइं पंचे खेत जोतत होइहँय? का मुरारी पढ़त लाग होई? आदि ।

(घ) संभाव्य वर्तमान काल :- जिस क्रिया के द्वारा वर्तमान काल में कार्य पूर्ण होने की संभावना बनी रहती है, उसे संभाव्य वर्तमान काल कहते हैं। यथा-गीता गाना गाबत होय, उँइ पंचे खेत जोतत होंय, मुरारी पढ़त होय आदि ।

(ड.) आज्ञा वर्तमान काल :- जिसमें आज्ञा के पालन का बोध वर्तमान समय में हो उसे आज्ञा वर्तमान काल कहते हैं। यथा गीता गाना गावत रहय, उँइ पंचे खेत जोतत रहँय, मुरारी पढ़त रहय आदि ।

(2) भूतकाल :- बीते हुए समय का बोध कराने वाले काल को भूतकाल कहते हैं। यथा उआ आय गा हय, सीता दउड़ लिहिस हय, बँधवा फूटिगा हय आदि। भूतकाल के निम्न लिखित भेद हैं-

(अ) सामान्य भूतकाल :- क्रिया के जिस रूप से सामान्यतया बीते हुए समय का बोध होता है (या क्रिया के समाप्त हो जाने का बोध हो) उसे सामान्य भूतकाल कहते हैं। यथा-गीता गाना गाइस ही, उँइ पंचे खेत जोतिन ही, मुरारी पढ़िस ही आदि।

(ब) आसन्न भूतकाल :- जब क्रिया कुछ समय पूर्व ही समाप्त हुई हो तो उसे आसन्न भूतकाल कहते हैं। गीता गाना गाइस हय, उँइं पंचे खेत जोतिन हय, मुरारी पढ़िस हय आदि ।

(स) पूर्ण भूतकाल :- क्रिया को समाप्त हुए बहत समय व्यतीत होने पर पूर्व भूतकाल

कहलाता है। यथा:-गीता गाना गाइस तय उँइ पंचे खत जोतिन तय, मुरारी पढ़िस तय आदि।

(द) तात्कालिक भूतकाल :- जिससे यह ज्ञात होता है कि किसी विशेष बीते हुए समय में क्रिया हो रही थी। यथा-गीता गाना गाबत रही हय, उँइ पंचे खत जोतत रहे हँय, मुरारी पढ़त रहा हय ।

(ई) संभाव्य भूतकाल :- जिससे क्रिया के भूतकाल में समाप्त हो जाने या पूर्ण हो जाने की संभावना हो, उसे संभाव्य भूतकाल कहते हैं। यथा-गीता गाना गाय लिहिस होई, उँइ पंचे खेत जोत लिहिन होइहँय, मुरारी पढ़ लिहिस होई आदि ।

(फ) अपूर्ण भूतकालः- जिसमें क्रिया भूतकाल में प्रारम्भ तो हो गयी हो; परन्तु अभी तक पूर्ण न हुई हो, उसे अपूर्ण भूतकाल कहते हैं। यथा-गीत अब तक गाना गाय रही हय, उँइ पंचे अबिहनव खेत जोतत लाग हँय मुरारी अबे तक पढ़त लाग हय आदि।

(य) संदिग्ध भूतकाल या (अनिश्चित) :- जिसमें क्रिया के भूतकाल में पूर्ण हो जाने की निश्चितता न हो, उसे संदिग्ध भूतकाल कहते हैं। यथा-का गीता गाना गाइस होई, का उहूँ पंचे खेत जोतिन होंइहीं, का मुरारी पढ़िस होई आदि।

(र) संकेत भूतकालः-जिसमें भूतकाल में क्रिया का होना दूसरी क्रिया पर निर्भर हो, उसे संकेत भूतकाल कहते हैं। यथा-गीता जागत त गाबत, उहूँ पंचे जाते त खेत जोतते, मुरारी आबत त पढ़त आदि।

(3) भविष्य कालः- आगे आने वाले समय का बोध कराने वाले काल को भविष्य काल कहते हैं। या क्रिया के जिस रूप से होने के समय का बोध होता है, उसे भविष्य कहते हैं। यथा-गीता दउड़ी हम काम करब, पानी बरसी आदि। भविष्य काल के निम्नलिखित भेद माने जाते है:-

(क) सामान्य भविष्य काल:- क्रिया के जिस रूप से यह ज्ञात होता है कि कार्य भविष्य में होगा, उसे सामान्य भवि-य काल कहते हैं। यथा-गीता गाना गाई, उहूँ पंचे खेत जोतिहँय, मुरारी पढ़ी आदि।

(ख) संभाव्य भविष्यकाल:- जिसमें क्रिया के प्रारम्भ होने की संभावना होती है, उसे संभाव्य भविष्य काल कहते हैं। यथा-होइ सकत हय गीता गाना गाबय, लागत हय उहूँ पंचे खेत जोतिहँय, साइद मुरारी पढ़य आदि।

(ग) आज्ञा भविष्यकाल:- जिसमें भविष्य में पालन की जाने वाली आज्ञा का बोध होता है, उसे आज्ञा भविष्य काल कहतें है। यथा- गीता गाना गाव, उहूँ पंचे खेत जोतयँ मुरारी पढ़य आदि।

(घ) पूर्ण कालिक क्रिया भविष्यकाल :- जिसमें भविष्य में कार्य के पूर्ण होने का बोध होता है, उसे पूर्ण कालिक क्रिया भविष्य काल कहते हैं। यथा- गीता गाय के अई, उहूँ पंचे खेत जोत के अइहँय, मुरारी पढ़के अई।

अध्याय 5

संधि

दो या इससे अधिक वर्णों के मेंल से जो विकार उत्पन्न होता है या उनके मिलने से जो परिवर्तन हो जाता है, उसे संधि कहते हैं। हिन्दी में स्वर, व्यंजन एवं विसर्ग तीन संधियॉ होती हैं। बघेली की प्रकृति अधिकांशतः संधि के स्थान पर बिसंधि की रही है, इसलिए संधियों के दर्शन यत्र-तत्र ही होते हैं। यही कारण है कि स्वर संधि के दीर्घ एवं गुणसंधि के कतिपय उदाहरण पाये जाते हैं। स्वर संधि के अन्य तीन भेद-वृद्धि संधि, यण संधि एवं अयादि संधि के नियमों का पालन भी बघेली नहीं पचा पाती है। यही कारण है कि संधि के नमूने बघेली में नहीं पाये जाते हैं।

स्वर संधि :- स्वर के साथ स्वर के मिलने से जो विकार उत्पन्न होता है, उसे स्वर संधि कहते हैं। स्वर संधि के बघेली में केवल दो भेद ही पाए जाते हैं।

(क) **दीर्घ संधि** :- सवर्ण लघु-लघु, दीर्घ-दीर्घ, लघु-दीर्घ एवं दीर्घ-लघु (अ, इ, उ) वर्णो के आपस में मिलने पर दीर्घ संधि बनती है। यथा-

लोहा+आर = लोहार (आ+आ+आ)
धरम+आतिमा = धरमातिमा (अ+आ=आ)
महा+आतिमा = महातिमा (आ+आ=आ)
सोना+आर = सोनार (आ+आ=आ)
नदी+ईस = नदीस (ई+ई=ई)
बधू+उतसव = बधूतसव (ऊ+उ=ऊ)

(ख) **गुण संधि** :- अ या आ के आगे यदि (इ, ई, उ, ऊ) आए तो अ+(इ,ई) =ए तथा आ + (इ, ई) = ए एवं अ+ (उ, ऊ) = ओ हो जाता है। यथा-

गन + ईस = गनेस (अ+ई=ए)
पलाग + उ = पलागो (अ+उ=ओ)
राज + इस्सर = राजेस्सर (अ+ई=ए)

नोटः- पूर्व पद का प्रथम वर्ण जब संधि की क्रिया करता है तो वह दीर्घ से लघ हो जाता है।

(ग) **वृद्धि संधि** :- बघेली में ऐ का स्थान पर (अइ) तथा औ के स्थान पर (अउ) का प्रयोग होने के कारण नियम लागू नहीं होता है। यथा-

मुर+अइठा = मुरइठा होने से नियम लागू नहीं होता
मुख+अउटा = मुखउटा होने से नियम लागू नहीं होता
काजर+अउटा = कजरउटा होने से नियम लागू नहीं होता

(घ) इसी तरह यण संधि में - जदि + अपि = जद्‌दपि होने से नियम लागू नहीं होता

सु+आगत = सुआगत होने से नियम लागू नहीं होता

(ड.) इसी तरह अयादि संधि में - गय+अक=गायक होने से नियम लागू नहीं होता
नय+इक = नाबिक होने से नियम लागू नहीं होता

व्यंजन संधि :- व्यंजन के साथ व्यंजन के मेंल या व्यंजन के साथ स्वर के मेंल से जो परिवर्तन आता है उससे बनी हुई संधि व्यंजन संधि कहलाती है।

नोट :- (1) बघेली में शब्द के अंत में हलंत का प्रयोग कहीं नहीं है या यों कहे कि शब्दांत में स्वर के बिना कोई वर्ण नहीं होता। अतः जब व्यंजन स्वर विहीन ही नहीं है तो व्यंजन संधि कैसे बनेगी ?

(2) व्यंजन संधि के संस्कृत अथवा हिन्दी से जो भी उदाहरण आए हैं उनमें संधि के लिए प्रयुक्त होने वाले बीच के स्वर का आगम या संयोजन कर संयुक्त वर्णो के स्थान पर स्वर का संयोग कर उसे सरल स्वर मय शब्द बना दिया गया है। जैसे सम्बन्ध में सम्+बन्ध की जगह सम+बन्ध = सम्बन्ध बना दिया है। जगन्नाथ = जगत् + नाथ को जगत+नाथ अर्थात् हलंत की जगह स्वर युक्त होकर जगत + नाथ हो गया, इससे संधि का नियम लागू ही नहीं हुआ ।

बघेली का संबंध ऊर्द्धमागधी से होने के कारण धार्मिक भूमि में इसका संस्कृत से नाता रहा है। इस कारण संस्कृत के जो शब्द आए वे बघेली की प्रकृति में आकर जैसे जगन्नाथ से जगन्नाथवा बन गया। बघेली का विस्तारण स्वरों को जोड़ तोड़ कर हुआ है। अतः यह भाषा से जुड़कर नहीं मुख-सुख से प्रभावित है।

संस्कृत का सरलीकृत रूप बघेली में आया तथा इसने संस्कृत के संयुक्त वर्णो को विभाजित कर लिया। विभाजन यानी संधि का विच्छेद कर लिया। इसकी प्रकृति विभाजन या विसंधि करने की है, इसलिए व्यंजन संधि का प्रश्न ही नहीं उठता । उत्+सुक=उत्सुक के रूप में नहीं (उतसुक होगा) अतः यदि कोई हठात् प्रयोग करता है तो वह बघेली के मिजाज के विरुद्ध होगा। अतः बघेली में व्यंजन संधि दुर्लभ है।

विसर्ग संधि :- विसर्ग के साथ स्वर या व्यंजन के मेंल से जो विकार उत्पन्न होता है उससे बनी संधि को विसर्ग संधि कहते हैं। बघेलखंडी में विसर्ग नहीं है, जब विसर्ग ही नहीं है तो उसके अस्तित्व का प्रश्न ही नहीं उठता । बघेली में जो विसर्ग संधि के शब्द आए हैं उनमें स्वरों का आगम करके उसे सरलीकृत कर लिया गया है।

समास

दो या इससे अधिक शब्द (पद) जब परस्पर संयोग करते हैं तो उनके मेंल से प्राप्त नया पद समास कहलाता है। समास का अर्थ है 'संक्षिप्त होना'। अर्थात् जब दो या अधिक पद आपस में मिलते हैं तो उनके मेंल को समास तथा बने हुए पद को सामासिक पद कहते हैं। यथा- अबहिनय, जगरचोर, हाथी-घोड़ आदि। समास के छः भेद होते हैं, जो निम्न हैं-

1:- **अव्ययीभाव समास** :- जिस सामासिक शब्द का पूर्व पद अव्यय एवं द्वितीय पद संज्ञा या विशेषण होता है तथा दोनों पद मिलकर अव्यय हो जाते हैं या अव्यय पदों को द्विरुक्ति भी हो सकती है, उसे अव्ययीभाव समास कहते हैं। यथा-

अकारन- विना कारन के
कबहूँ-कबहूँ-कभी-कभी
रातव-रात - रातभर में
अनरूप - रूप के योग्य

2:- **कर्मधारय समास** - जिस सामासिक पद का पहला पद विशेषण एवं दूसरा पद विशेष्य होता है अर्थात् उपमेंय में उपमान का मेंल होता है, उसे कर्मधारय समास कहते हैं। यथा- ललमुँहा - लाल विशेषण मुँह विशेष्य।

खुसड़दता- खूसड़ उपमान दाँत उपमेंय ।

3:- **तत्पुरूष समास** - जिस सामासिक पद का दूसरा या उत्तर पद प्रधान हो, उसे तत्पुरुष समास कहते हैं। इसे समास में कर्त्ता और संबोधन को छोड़कर शेष कारकों की विभक्तियों का लोप हो जाता है। इसलिए 6 कारकों के नाम पर तत्पुरु-ा समास के छः भेद होते हैं। यथा-

1:- कर्मतत्पुरुष - नरकबासी। नरक का बासी 'का' विभक्ति का लोप है।
2:- करणतत्पुरुष- कनबहिरा। कान से बहिरा 'से' विभक्ति का लोप है।
3:- सम्प्रदान तत्पुरुष- गउदान। गाय का दान 'का' विभक्ति का लोप है।
4:- अपादान तत्पुरुष- रनभगा। रन से भागा 'से' विभक्ति का लोप है।
5:- अधिकरण तत्पुरुष- घोड़चढ़ा। घोड़े पर चढ़ा 'पर' विभक्ति का लोप है।
6:- संबंध तत्पुरुष - खटकिरबा । खाट केर किरवा 'केर- विभक्ति का लोप है।

(4) **द्वन्द्व समास** :- जिस सामासिक पद में दोनों पद प्रधान या समान हों उसे द्वन्द्व समास कहते हैं। इसमें और शब्द का लोप होता है। यथा-

महतारी-बाप - महतारी और बाप में दोनों पद समान है।
आमा-महुआ- आमा और महुआ में दोनों पद समान है।

(5) **द्विगु समास** :- जिस सामासिक पद का पहला पद संख्यावाची तथा दूसरा पद संज्ञा

हो उसे द्विगु समास कहते हैं। यथा-

नउमत - नउ (नौ) संख्यावाची तथा मत संज्ञा शब्द है।

चउमास- चउ (चार) संख्यावाची तथा मास संज्ञा शब्द है।

(6) **बहब्रीहि समास** - जिस सामासिक पद में दो में से कोई भी पद प्रधान न होकर समस्त पद संज्ञा की विशेषता बतलाएँ या दोनों पद के मेंल से तीसरा नवीन पद ध्वनित हो उसे बहुब्रीहि समास कहते हैं। यथा-

लीलकंठ- लील (नीला) है कंठ जिसका अर्थात् भगवान शंकर

गिरधारी- गिर (गिरि) को धारण करने वाला अर्थात् भगवान कृष्ण ।

शब्द शक्ति

जिनसे शब्द एवं अर्थ की प्रतीति होती है, उन्हें शब्द शक्ति कहते हैं। इस तरह शब्द शक्ति का आशय शब्द एवं अर्थ के समन्वय से है। शब्दों के जितने प्रकार के अर्थ होंगे,शब्द शक्तियाँ भी उतने प्रकार की होंगी। बघेली में भी हिन्दी की तरह वाचक (वाच्यार्थ) लक्षक (लक्ष्यार्थ) एवं व्यंग्यार्थ व्यंजक (व्यंजनार्थ) तीन प्रकार के अर्थ होते हैं, इसलिए वाच्यार्थ से अभिधा, लक्ष्यार्थ से लक्षणा एवं व्यंग्यार्थ से व्यंजना नामक तीन शब्द शक्तियाँ हैं।
यथा-

1:- **अभिधा** :- जब किसी अर्थ की प्रतीति वाच्यार्थ से सीधे-सीधे हो जाती है तो उसे अभिधा शब्द शक्ति कहते हैं। यथा-

''फुदुकि रही गउरइया अँगना दुआर मा,
भँइस लइ चराइ रहे, लड़िका, कछार मा।
लउटँय जब सांझ घरे, जूझइँ गोरुआरी से,
दूध का रिसाइ जइसे, कृस्न महतारी से ।। (मैथिलीशरण शुक्ल)

यहाँ पर शब्दों के अर्थ की प्रतीति वाच्यार्थ से सीधे-सीधे हो रही है, इसके लिये अन्य उपायों की आवश्यकता नहीं है। अतः यहाँ पर अभिधा शब्द शक्ति है।

2:- **लक्षणा** :- जब किसी अर्थ की प्रतीति मुख्यार्थ द्वारा नहीं होती या वाच्यार्थ के अतिरिक्त भी एक अर्थ निकलता है, तब उसके अर्थ के लिए लक्ष्यार्थ का उपयोग किया जाता है। अतः लक्ष्यार्थ से अर्थ की प्रतीति होने के कारण उसे लक्षणा शब्दशक्ति कहते हैं। लक्षणा में कोई मुहावरा, वक्र कथन अथवा अन्यार्थ भी निहित रहता है। यथा-

''खत का तिजारी भय, गाँव भा बेराम ।
सामन मा पीपर तर, बइठे बिसराम।। (कालिका प्रसाद त्रिपाठी)

'खेत का तिजारी भय' का लक्ष्यार्थ है- अकाल के कारण धीरे-धीरे खेत का सूखना । 'गाँव भा बेराम' का लक्ष्यार्थ है- गाँव के सभी लोग बीमार हैं। 'सामन मा पीपर तर, बइठे

विसराम' का लक्ष्यार्थ है-जब किसान के कार्य का समय है वह उदासीन एवं चिंतामग्न होकर अकर्मण्य बैठा है। कूड़खाय-मूड़ उदाहरण में लक्ष्यार्थ है-रक्षक ही भक्षक है।

3:- **व्यंजना** :- जब किसी शब्द के अर्थ की प्रतीति न तो वाच्यार्थ से होती है और न ही लक्ष्यार्थ से तब व्यंग्यार्थ का प्रयोग किया जाता है। व्यंजना में अमिधा और लक्षणा के अतिरिक्त भी अर्थ निकलता है तथा अनेक संदर्भो की अनेकार्थता उत्पन्न होती है। जैसे 'दिन बूड़िगा' में दिन डूबने का अर्थ मजदूर के लिए छुट्टी, गृहिणी के लिए भोजन बनाने की तैयारी, चरबाहे के लिए मवेशियों को लेकर घर लौटना, पुजारी के लिए
संध्या पूजन, सरकस बालों के लिये 'शो' का समय आ गया आदि है।

"जिन्दगी बस चार, आमा, महुआ फेर कहुआ।।" उपर्युक्त हाइकू में प्रतीक के माध्यम से एक साथ कई अर्थो की प्रतीति व्यंग्यार्थ से करने के कारण व्यंजना शब्द शक्ति की झलक है। चार-संख्या, चिरौंजी का पेड़ चार अवस्थाएँ है आदि । शैशवास्था, किशोरावस्था, मधुर युवावस्था और वृद्धावस्था । चार चिरौंजी की कोमलता के कारण शैशवस्था का प्रतीक भी है।

आमा (आम) फल है जो मिठास एवं खट्टेपन के साथ जिन्दगी को खुशियों से भरने में समर्थ है। यह किशोरावस्था का प्रतीक होने के साथ ही अवस्था के दूसरे पादान को भी चित्रित करता है।

महुआ-फूल एवं फल (परिश्रम एवं परिणाम) के साथ जिन्दगी के व्यक्तिगत एवं सामाजिक उपयोग से जुड़ा है यह जहां मादकता का प्रतीक है, वहीं जिन्दगी में युवावस्था को तीसरे पादान को भी प्रस्तुत करता है।

कहुआ (अर्जुन) छाल एवं लकड़ी की उपयोगिता के साथ शारीरिक जर्जरता एवं स्वभाव की दृष्टि से चिड़चिड़ेपन का परिचायक है। यह शुष्कता एवं वृद्धावस्था का प्रतीक भी है तथा जिन्दगी के चौथे एवं अन्तिम पादान को भी सूचित करता है।

शब्द गुण

भाषा को अपने आपको प्रकट करने वाली विशेषता गुण कहलाती है। गुण का संबंध भावाभिव्यक्ति एवं रस से है। अतः गुण काव्य का वह तत्व है जिसके आधार पर रस संकेतिक होता है। हिन्दी में गुणों की संख्या तीन मानी जाती है, इसी आधार पर बघेली में भी गुणों को स्वीकार किया गया है यथा-

1:- **माधुर्य गुण** :- जिस काव्य को पढ़ने से मन में सरसता, कोमलता आदि का भाव पैदा होता है उसे माधुर्य गुण माना जाता है माधुर्य गुण में समास रहित या समासयुक्त छोटे पदों का प्रयोग किया जाता है इसमें कोमलकांत पदाबली का प्रयोग होता है। इस गुण में क, च, त, प वर्ग के वर्णो के अतिरिक्त र का प्रयोग

अधिकांशतः किया जाता है। श्रृंगार, हास्य, शांत एवं वात्सत्य रस में इसका प्रयोग पाया जाता है। **यथा–**

"फुदकि रही गउरइया, अँगना दुआर मा ।
भँइस लइ चराय रहे, लड़िका कछार मा ।।
लउटँय जब साझ घर, जूझइँ गोरुआरी से ।
दूध का रिसाइ जइसे, कृष्ण महतारी से "। (रामचन्द्र सोनी विरागी)

2:- **ओज गुण** :- जिस काव्य को पढ़ने या सुनने से मन में उत्साह बीरता, आवेश, क्रोध आदि की अभिवृद्धि होती है वह ओज गुण कहलाता है इसमें दीर्घ सामासिक पदावली तथा कठोर शब्दों का प्रयोग होता है। यथा-

"चटकि-चटकि कइ पाथर चटके,
बारू धूधुरि चढ़े अकाश ।
चारिउ कइती धुँआ छायगा
नहीं देखाय दूर अउ पास ।" (गोमती प्रसाद विकल)

3:- **प्रसाद गुण** :- जिस काव्य को पढ़ने या सुनने से उसका भाव सहज और बोधगम्य होता है उसे प्रसाद गुण कहते हैं। इसके शब्द सहज, सरल, स्पष्ट एवं शीघ्र ग्राह्य होते हैं। प्रायः सभी रसों में इस गुण का प्रयोग पाया जाता है।

"खमखर बरसा कर्रा घाम । घर मा एक जन परे बेराम।
"कोहू केर गिरा अगरा-पगरा, अउ कोहू के गिरा ओसार।
हरीदास केर मुड़हर गिरिगा, रोमइ धरे कपार ।। (हरिदास)

अध्याय 6

कारक

संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उनका क्रिया एवं अन्य पदों के साथ संबंध ज्ञात होता है, उसे कारक कहते हैं। यथा-राम केर भँइसी चारा खाइस (राम की भैंस ने घास खाया) उआ सुरेस खातिर किताब खरीदिस (उसने सुरेश के लिये पुस्तक खरीदी) । यहाँ पर क्रमशः खाइस तथा खरीदिस क्रिया पद है, जिनका उपर्युक्त वाक्यों में अन्य पदों के साथ केर एवं खातिर शब्दों के द्वारा संबंध स्थापित हो रहा है, इसलिए ये कारक चिहून है। प्रत्येक कारक के अपने चिहून होते हैं, जिनके द्वारा उनकी पहचान होती है। बघेली में भी करकों की संख्या आठ है। यथा-

	कारक	चिहून
1-	कर्त्ता कारक	त
2-	कर्म कारक	का, कौंहीं, केहीं, के निती
3-	करण कारक	से, ते, सेरे
4-	अधिकरण कारक	मा, पर, मौंहीं
5-	सम्प्रदान कारक	केंही, का, कौंहीं, लाने, बास्ते, निमित्त
6-	अपादान कारक	के, से, ते
7-	सम्बन्ध कारक	का, केर, कौंही, के
8-	सम्बोधन कारक	अरे, हाय, हाय-हाय, भइलों, भइकरा, आँय, कसो, हे भगमान, हुँह, मोरबप्पा आदि ।

यहाँ अध्ययन की सुविधा एवं उनमें तुलना की दृष्टि से कारकों के क्रम में परिवर्तन किया जा रहा है।

1:- कर्त्ता कारक :- संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से क्रिया करने वाले का बोध होता है, उसे कर्त्ता कारक कहते हैं। यथा-गइया बूसा खात ही (गाय भूसा खाती है) उआ रमायन पढ़म हय (वह रामायण पढ़ता है) । कर्त्ता की पहचान के लिये वाक्य में को, का प्रश्न करने पर जो उत्तर आता है, वह कर्त्ता कारक होगा । यहाँ पर क्रमशः को का प्रश्न करने पर गइया एवं उआ उत्तर आता है। अतः गइया एवं उआ कर्त्ता कारक है। बघेली में कर्त्ता का चिहून प्रच्छन्न हो

जाता है; परन्तु कहीं-कहीं त का प्रयोग होता है। (त) लघु एवं दीर्घ (ता) दोनों रूपों में प्रयुक्त होता है।

2:- कर्म कारक :- (का, काही, केही निती) क्रिया के व्यापार का फल जिस संज्ञा अथवा सर्वनाम पद पर पड़ता है, उसे कर्मकारक कहते हैं। कर्म की पहचान के लिये वाक्य में केखा, काही, का शब्द करने पर जो उत्तर आता है, वह कर्म कारक होगा । यथा उआ रमायन पढ़त हय (वह रामायण पढ़ता है) दिनेस लरिकन काही पीटिस (दिनेश ने लड़को को पीटा) । यहाँ क्रमशः का पढ़त हय एवं काही पीटिस हय के उत्तर में रमायन एवं लरिकन का आता है। इसलिये ये दोनों शब्द कर्मकारक के हैं।

3:- सम्प्रदान कारक :- (केही, का, काही, लाने, निती, निमित) जहाँ संज्ञा या सर्वनाम के लिये कुछ देने का संकेत हो, वहाँ सम्प्रदान कारक होता है। यथा उआ उरमिला काहीं किताव पढ़य का दिहिस (उसने उर्मिला को पुस्तक पढ़ने के लिये दिया) महतारी स्याम का रुपिया दिहिस (माँ ने श्याम को रुपया दिया) । यहाँ पर क्रमशः काही एवं का कारक के चिह्न है, जिनसे क्रमशः किताब एवं रुपिया देने का बोध होता है। इसलिए ये सम्प्रदान कारक हैं।

नोट :- कर्मकारक एवं सम्प्रदान कारक दोनों में (का, काही, निती, केही का) समान रूप से कारक चिह्नो का प्रयोग होता है। इनमें अन्तर प्रयोग के आधार पर किया जाता है। यथा-

कर्मकारक	सम्प्रदान कारक
गइया केही बूसा आय	गइया केही बूसा डारेन
उआ आमा रमेंस के निती आय	उआ आमा रमेंस का दीन गा हय

कर्मकारक में विभक्ति का प्रयोग सामान्य रूप से किया जाता है, जबकि सम्प्रदान कारक की विभक्ति का प्रयोग कुछ देने के लिये किया जाता है।

4:- करणकारक (से, ते, ता) :- संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से क्रिया करने के साधन का बोध हो, उसे करण कारक कहते हैं। यथा-मलाह बाँस से नाव खेबत हय (मल्लाह बाँस से नाव चलाता है) । उँइ लजुरी से पानी भरती हई (वे रस्सी से पानी भर रही हैं) आदि। अतः यहाँ पर प्रयुक्त विभक्ति करण कारक की विभक्ति है; क्योंकि विभक्ति का प्रयोग सामान्य रूप से किया गया है।

बघेली में किससे शब्द लगाने पर जो उत्तर आता है वह करण कारक होगा। यहाँ किससे शब्द लगाने पर क्रमशः उत्तर बाँस से तथा लजुरी से आता है अतः इनमें करण कारक है।

5:- **अपादान कारक** (के, से, ते) :- संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से एक वस्तु दूसरी बस्तु से अलग होती है, वहाँ अपादान कारक होता है। यथा भँइसी के सींघ टूटि के गिरि गय (भैंस की सींग टूटकर गिर गई) तथा धनुष से तीर निकलिगा (कमान से तीर निकल गया) यहाँ

क्रमशः सींघ भैंस से तथा तीर धनुष से अलग हो रहा है, इसलिए अपादान कारक होगा। करण कारक एवं अपादान कारक में अंतर यह होता है कि करण में संबंध जुड़ा रहता है, जबकि अपादान में वस्तु अलग हो जाती है।

6:- **संबंध कारक** (का, के, केर, काही) :- संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से उनका पारस्परिक संबंध प्रकट होता है, उसे संबंध कारक कहते हैं। यथा-गीता के महतारी सुसीला आय (गीता की माँ सुशीला है) इया छेरी दाई केर आय (यह बकरी दादी की है) ।

यहाँ पर क्रमशः गीता का संबंध सुशीला से के विभक्ति के द्वारा तथा छेरी का संबंध दाई से केर विभक्ति के माध्यम से होता है; इसलिए इनमें संबंध कारक है। संबंध कारक का संबंध क्रिया से न होने के कारण विद्वान इसे कारक की श्रेणी में नहीं मानते।

7:- **अधिकरण कारक** (मा, माहीं, पर) :- संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से क्रिया के स्थान, समय या व्यवहार का बोध होता है, उसे अधिकरण कारक कहते हैं। यथा-उनहीं लच्छमी पर विसुआस हय (उन्हें लक्ष्मी पर विश्वास है) अबधेस के घर मा वन्हा फइले हँय (अवधेश के घर में कपड़े फैले हैं)।

यहाँ पर क्रमशः लच्छमी तथा घर के साथ विभक्ति के रूप में 'पर' तथा 'मा' का प्रयोग स्थान एवं व्यवहार के रूप में किये जाने के कारण अधिकरण कारक है।

8:- **संबोधन कारक** (ए, अरे, आँय, उँह, हुँह, हल्या, कसो, हाय, हाय-हाय, मोरबप्पा, मोरबल्ला, हे भगमान आदि) :- संज्ञा या सर्वनाम के जिस रूप से किसी को पुकारा, बुलाया या उद्‌बोधित किया जाता है, उसे
संबोधन कारक कहते हैं। बघेली में कहीं-कहीं क्रियात्मक संबोधन में मिलते हैं। यथा-लिहे-लिहे! भागय न पाबय । दउड़ा-दउड़ा आदि) अरे किसन! तुम कबय आया (अरे किसन! तुम कब आये) हे भगमान! हम का करी (हे भगवन हम क्या करें) अरे! लरिकन का पीटे डरत्या हया (अरे! लड़को की पिटाई कर रहे हो) आदि ।

यहाँ पर क्रमशः अरे किसन, हे भगमान, अरे का प्रयोग में संबोधन का प्रयोग किये जाने के कारण संबोधन कारक है।

एक वाक्य में सभी कारको का प्रयोग - भइलो! राम त राबन का विभीषन के खातिर ओके बोड़री मा बान से मारिन अउर वा रथ से नीचे गिरिगा ।

संबोधन - भइलो (!) कर्त्ता- राम (त) कर्म- राबन (का)

सम्प्रदान- विभी-न (के लाने) अधिकरन- बोड़री (मा) संबंध- ओके (के)

करन - बान (से) अपादान - नीचे गिरिगा। (से)

वाक्य विश्लेषण

वाक्य सार्थक शब्दों का व्याकरणिक समुच्चय है, जो अर्थ की दृष्टि से पूर्ण होता है। मनुष्य के विचारों को पूर्णतया मौखिक या लिखित रूप में प्रकट करने वाले पद समूह को वाक्य कहते हैं। यथा-हरिन दउड़त हँय (हिरण दौड़ते हैं) रमेंस सकारे से गाबत आय (रमेश सुबह से गा रहा है) आदि ।

वाक्य के अंग :- वाक्य के दो अंग होते हैं- (1) उद्देश्य (2) विधेय ।

1:- **उद्देश्य** :- जिस वस्तु या व्यक्ति के बारे में कहा जाता है, उसे उद्देश्य कहते हैं। उद्देश्य में कम से कम एक संज्ञा के बदले में सर्वनाम या संज्ञा की तरह प्रयुक्त विशेषण होता है। यथा हरिन दउड़त हँय एक वाक्य है, जिसमें हिरण के बारे में कहा गया है। अतः हिरण उद्देश्य है।

2:- **विधेय** :- उद्देश्य के बारे में जो कुछ कहा जाता है, उसे विधेय कहते हैं। उपर्युक्त वाक्य में हरिण के विषय में कहा गया है (दउड़त हँय) अतः यह विधेय है, साथ ही दउड़त हँय क्रिया शब्द भी है।

1:- **पद** :- जिस तरह भाषा की इकाई वाक्य होता है, उसी तरह वाक्य की इकाई पद होता है जो अन्य शब्दों के साथ अपना संबंध स्थापित करते हैं तभी वाक्य की रचना संभव हो पाती है। शब्द के दो रूप होते हैं-(1) शुद्ध या मूल (2) सम्बन्ध तत्वयुक्त । संबंध तत्व युक्त शब्द ही पद कहलाता है। अर्थात् वाक्य में प्रयुक्त होने वाले शब्द, शब्द न होकर पद कहलाते हैं। उआ गनेस का पढ़ाबत हय (वह गणेश को पढ़ता है) यहाँ उआ गनेस का पढ़ावत है शब्द न होकर पद है क्योंकि ये संबंध तत्व से युक्त है। यहाँ का परसर्ग है।

2:- **पदक्रम** :- वाक्य के अंदर प्रत्येक पद का स्थान निश्चित होता है, इसे ही पदक्रम कहते हैं। पदक्रम वाक्य में अभीष्ट अर्थ की प्रतीति कराता है। अतः पदक्रम वाक्य का मूल आधार है। बघेली में भी हिन्दी की तरह पहले कर्त्ता, फिर विशेषण फिर कर्म (सकर्मक क्रिया होने पर) और उसके पहले उसका विशेषण उसके बाद पूरक और उसके पूर्व उसका विशेषण तथा अंत में क्रिया और उसके पहले उसका विशेषण रखा जाता है। यथा-सिवनाथ तेज दउड़त लाग हय (शिवनाथ तेज दौड़ रहा है) यहाँ कर्त्ता + क्रिया विशेषण + क्रिया का प्रयोग किया गया है।

अन्विति :- वाक्य में संज्ञा, क्रिया आदि पदों के उचित आपसी तालमेंल/यथाक्रम को अन्विति कहते हैं। वाक्य के प्रत्येक पद में अन्विति आवश्यक होती है। इसके बिना वाक्य निरर्थक हो जाता है। यथा-'उआ अच्छा मनई हय।' (सर्वनाम + विशेषण+ संज्ञा+क्रिया की अन्विति।

वाक्य के प्रकार

1:- रचना के अनुसार

2:- अर्थ के अनुसार

3:- वाच्य के अनुसार

1:- रचना के अनुसार :- वाक्य के तीन भेद होते हैं -

(क) सरलवाक्य - साधारणतया जिस वाक्य में एक ही कर्त्ता एवं क्रिया होती है, उसे साधारण वाक्य कहते हैं। जैसे गीता पढ़त ही-यहाँ गीता कर्त्ता एवं पढ़त ही क्रिया शब्द है।

(ख) मिश्र वाक्य :- जिस वाक्य में एक प्रमुख वाक्य एवं अन्य आश्रित वाक्य होते हैं, उसे मिश्र वाक्य कहा जाता है। एसे, तऊ एहिन से, तब आदि इसके संयोजक हैं। यथा-बँधवा भरिगा तय एहिन से खूब पइदाबार भय हय (बाँध भर गया था, इसी कारण पैदावार अधिक हुई है)। यहाँ बाँध भर गया था, प्रमुख वाक्य है तथा पैदावार अच्छी हुई आश्रित उपवाक्य है तथा इसी से संयोजक शब्द है।

मिश्र वाक्य के अंग :-

(1) पदबंध :- डॉ. हरदेव बाहरी के अनुसार- वाक्य के उस भाग को जिसमें एक से अधिक पद परस्पर सम्बद्ध होकर अर्थ तो देते हैं; परन्तु पूरा अर्थ नहीं देते तो, उन्हें पदबंध या वाक्यांश कहते हैं। " इस दृष्टि से पदबंध में तीन बातें आवश्यक हैं - (1) एक से अधिक पद होते हैं (2) पदबंध किसी वाक्य का भाग होता है (3) पद आपस में इस तरह जुड़े रहते हैं कि वे एक वाक्य की इकाई बन जाते हैं। आश्रित उपवाक्य के 3 भेद माने जाते है-

(1) संज्ञा उपवाक्य- जो आश्रित उपवाक्य संज्ञा/सर्वनाम की तरह प्रयोग में लाया जाये उसे संज्ञा उपवाक्य कहते हैं। इसका संयोजक कि है। यदि कि प्रधान उपवाक्य के बाद आता है तो संज्ञा उपवाक्य ही होता है। प्रधान वाक्य में क्या लगाने पर यदि उत्तर मिलता है तो संज्ञा उपवाक्य ही होगा। यथा-रमेंस का बिसुआस हय कि स्याम पढ़ी । यहाँ रमेश का विश्वास है प्रधान उपवाक्य कि संयोजक एवं श्याम पढ़ी संज्ञा उपवाक्य है। कहीं कहीं कि संयोजक का प्रयोग न होकर विराम का प्रयोग भी होता है। हम जानित हयन, उआ चला जई, (हम जानते हैं वह चला जायेगा) उआ कहिस कि हम बजार जाब (उसने कहा कि हम बाजार जायेगें। यहाँ उआ कहिस, प्रधान उपवाक्य है तथा हम बाजार जाब संज्ञा उपवाक्य है, जो 'कि' संयोजक के द्वारा प्रधान उपवाक्य से जुड़ा हुआ है। उआ (उसने) एवं हम सर्वनाम शब्द है।

(2) विशेषण उपवाक्य - प्रधान उपवाक्य के संज्ञा/सर्वनाम की विशे-ाता बतलाने वाला उपवाक्य विशेषण उपवाक्य कहलाता है। जेमा, जउन, जेतना, जेखर, जइसन, जेत्ता आदि इसके

संयोजक है। यथा- जउन कूकुर काल चाबिस तय, आज फेर आबा हय (वह कुत्ता जिसने कल काटा था, आज फिर आया है) यहाँ कूकुर काल चाबिस तय विशेषण उपवाक्य जउन संयोजक एवं आज फेर आबा हय प्रमुख वाक्य हैं।

(3) क्रिया विशेषण उपवाक्य- जो उपवाक्य मुख्य उपकाव्य की क्रिया की विशेषता बतलाता है, उसे क्रिया विशेषण उपवाक्य कहते हैं। जबय, जबहिन, तबय, तबहिन, जहँय, जेमा, जेकर आदि प्रमुख संयोजक है। क्रिया विशेषण के उपवाक्यों से स्थान, समय, कारण, उद्देश्य, फल, अवस्था, दशा, समानता, मात्रा आदि की जानकारी प्राप्त होती है। यथा- जबय साँझ होई, तबय अँधियार होइ जई (जब संध्या होगी, तब
अंधेरा हो जावेगा)। उपर्युक्त वाक्य में जबय साँझ होई क्रिया विशेषण उपवाक्य है। इसी तरह जबहिन पानी बरसी तबहिन बँधबा फूटि जई (जब वर्षात होगी, बाँध फूट जाएगा) में जबहिन पानी बरसी क्रिया विशेषण उपवाक्य है।

(ग) संयुक्त वाक्य :- जब दो या इससे अधिक स्वतंत्र वाक्य योजकों से जुड़ते हैं तो उनसे संयुक्त वाक्य की रचना होती है। इसके योजक-अउर (और) पय (परन्तु) फेर (फिर) बलुक (बल्कि) आदि। यथा- गीता पढ़त ही पय सीता लिखत ही (गीता पढ़ती है; परन्तु सीता लिखती है) हम घूँमय गयन अउर सूरज नहीं गा (हम घर गये और सूरज नहीं गया) । दृष्टव्य है पहले वाक्य में गीता पढ़त ही तथा सीता लिखत ही दोनों स्वतंत्र वाक्य हैं जो पय संयोजक के माध्यम से जुड़े है वहीं दूसरे वाक्य में हम घर गयन तथा सूरज नहीं गा दोनों स्वतंत्र वाक्य हैं जो और संयोजक के द्वारा एक दूसरे से जुड़े हैं।

अर्थ के आधार पर वाक्य के भेद

कथनकर्त्ता के मन में पड़े हुए विचारों के द्वारा वाक्य की संरचना पर प्रभाव पड़ता है। अतः विचार संरचना को अर्थ प्रभावित करते हैं जिसके आधार पर वाक्यों को आठ भागों में विभाजित किया जाता है -

1:- विधिवाचक :- जिन वाक्यों के द्वारा कथनकर्त्ता की बात सामान्य होने का बोध होता है, उसे विधिवाचक वाक्य कहते हैं। यथा-गीता किताब पढ़त लाग ही ।

2:- निषेधवाचक :- जिन वाक्यों के द्वारा किसी कार्य के न होने का बोध होता है, उसे निषेधवाचक वाक्य कहते हैं । यथा-गीता किताब नहीं पढ़य ।

3:- आज्ञावाचक :- जिन वाक्यों के द्वारा किसी कार्य के लिये आज्ञा दी जाती है, उसे आज्ञावाचक वाक्य कहते हैं यथा-गीता किताब पढ़ ।

4:- प्रश्नवाचक :- जिन वाक्यों के द्वारा किसी प्रकार के प्रश्न का बोध होता है, उसे प्रश्नवाचक वाक्य कहते हैं। यथा-का गीता किताब पढ़त ही ?

5:- विस्मय वाचक :- जिन वाक्यों के द्वारा आश्चर्य, दुःख, सुख, क्रोध, घृणा, लज्जा आदि का बोध होता है, उसे विस्मय वाचक वाक्य कहते हैं। यथा-अरे! गीता किताब पढ़त लाग ही।

6:- संदेहवाचक :- जिन वाक्यों के द्वारा किसी प्रकार के संदेह का बोध होता है, उसे संदेहवाचक वाक्य कहते हैं। यथा-होइ सकत हय गीता किताब पढ़त होय।

7:- इच्छावाचक :- जिन वाक्यों के द्वारा किसी प्रकार की इच्छा का बोध होता है, उसे इच्छावाचक वाक्य कहते हैं यथा-गीता किताब से पढ़य ।

8:- संकेतवाचक :- जिन वाक्यों के द्वारा किसी प्रकार के संकेत का बोध होता है, उसे संकेत वाचक वाक्य कहते हैं। यथा-जो गीता ठीक से पढ़त ता अच्छे नम्बरन से पास होत।

वाच्य की दृष्टि से वाक्य के भेद

जिन वाक्यों में क्रिया के स्वरूप का उद्देश्य कर्त्ता, कर्म या भाव के आधार पर होता है उसे वाच्य कहा जाता है। वाच्य की दृष्टि से वाक्य के तीन भेद होते हैं।

1:- कर्तृवाच्य :- जिन वाक्यों में कर्त्ता का सीधा सम्बन्ध क्रिया के साथ होता है, उसे कर्तृवाच्य कहते हैं। कर्तृवाच्य में क्रिया कर्त्ता के अनुसार होती है। यथा-गीता किताब पढ़त ही।

2:- कर्मवाच्य :- जिन वाक्यों में क्रिया का संबंध कर्त्ता से न होकर कर्म से होता है, उसे कर्मवाच्य कहते हैं। यथा-कर्मवाच्य में क्रिया कर्म के अनुसार होती है। गीता से किताब पढ़ी जात ही। गीता के द्वारा किताब पढ़ी जाती है।

3:- भाववाच्य :- जिन वाक्यों में क्रिया का संबंध कर्त्ता एवं कर्म से न होकर क्रिया से होता है, उसे भाववाच्य कहते हैं। भाववाच्य में क्रिया अकर्मक होती है तथा वह केवल भाव के प्रति उत्तरदायी होती है। भाववाच्य में क्रिया सदा पुलिंग तथा एक वचन में होती है। यथा--

गीता से पढ़ा जात हय । (गीता से पढ़ा जाता है)
रमेश से दउड़ा जात हय । (रमेश से दौड़ा जाता है)
टोरबन से रोबा जात हय । (बच्चो से रोया जाता है)

ध्यातव्य है कि पुलिंग, स्त्रीलिंग तथा बहुवचन के साथ भी क्रिया का प्रयोग एक वचन में ही किया जाता है।

अध्याय 7

मुहावरे

मुहावरा मूलतः अरबी भाषा का शब्द है, जिसका अर्थ बात-चीत करना होता है; किन्तु हिन्दी ने इसे एक नया अर्थ प्रदान कर दिया है। हिन्दी में मुहावरा ऐसे वाक्य खण्ड के लिए प्रयोग में आता है जो अपने सामान्य अर्थ को छोड़कर लाक्षणिकता के लिए रूढ़ हो गया है। अब नए मुहाबरे में तो ये कहीं-कहीं व्यंग्यार्थ या व्यंजना के लिए भी प्रयुक्त होते हैं।

मुहावरा एक वाक्यांश है, जिसके सहयोग से भाषा को चुस्त और प्रभावपूर्ण बनाया जाता है। इसका प्रयोग करने पर भाषा में एक विशिष्ट आकर्षण हो जाता है। यह इतना मर्मस्पर्शी होता है कि सीधे श्रोता के हृदय पर चोट करता है। ये भाषा को तीक्ष्ण करते हैं, भाव की गहराई बढ़ाते हैं तथा थोड़े में बहुत कुछ कह देते हैं।

''संसार में मनुष्य लोक व्यवहार में जिन वस्तुओं या विचारों को बड़े कौतूहल से देखा, समझा और बार-बार उनका अनुभव किया उन्हीं को उसने शब्दों में बाँध दिया वे ही मुहावरे कहलाते हैं।''

विशेषताएँ :-

1- मुहावरे का संबंध सम्पूर्ण जीवन और जगत से है।

2- इनमें लक्ष्यार्थ की प्रमुखता होती है।

3- मुहावरे वाक्यांश होते हैं, जो विलक्षण अर्थ की प्रतीति कराते हैं।

4- मुहावरे का अर्थ प्रसंगानुसार होता है।

5- मुहावरे समाज, देश एवं परिस्थिति के अनरूप बनते और बिगड़ते हैं।

मुहावरे और लोकोक्तियों में अन्तर :-

मुहावरे	लोकोक्तियाँ
वाक्यांश होते हैं।	वाक्य होती है।
प्रयोग पर आधारित होते हैं।	स्वतंत्र होती है।
लाक्षणिक वक्रता होती है।	किसी घटना या कहानी से जुड़ी होती है।
वाक्य पर आश्रित होते हैं।	तथा इसमें व्यंग्यार्थ प्रधान होता है।
मुहावरे से भाषा में चुस्ती आती है।	भाव में पूर्ण होती है।
	कहावतों से मत की पुष्टि होती है।

बघेली मुहावरे -

1-	अमचुर अस मुँह बनाउब	असहमति प्रकट करना
2-	अइरा घूमब	छूट होना
3-	अंटी-चढ़बंटी मारब	स्तर से अधिक काम करना ।
4-	आँखीं के काजर पोछब	बारीकी से चोरी करना ।
5-	आँखी तरेरब	क्रोधित होकर डराना ।
6-	आँखी काढ़ब	गुस्सा प्रकट करना ।
7-	आँखी खोलब	सच्चाई समझना ।
8-	आँखी मूँदब	कुछ न देखना ।
9-	अँउठा देखाउब	चिढ़ाना
10-	आमिल-गुरतुर करब	निर्णय न ले पाना।
11-	आँखी केर पुतरी होब	बहुत प्यारा होना।
12-	ओड़च देब	पैर के गुठने से रौंदना।
13-	ओली केर जूजू	हमेंशा डराना ।
14-	ओंठ काटब	क्रोधित होना।
15-	कच्ची मछरी कस उबठब	बिल्कुल पसंद न होना।
16-	कोइला कस दहकब	अधिक चमक होना।
17-	कान काटब	जीत लेना ।
18-	खीस काढ़ब	निर्लज्ज होना।
19-	खून पसीना एक करब	कठिन परिश्रम करना ।
20-	गलरी कस कचकचाब	बहुत शोर गुल करना ।
21-	गंगा नहाब	मुक्ति पाना ।
22-	गंगा बहाउब	विकास करना । अतिश्रम करना ।
23-	गाल फुलाउब	अधिक नाराज होना।
24-	घूर अस उपछब	बुरी तरह से कहना
25-	चूँदी बाँधब	जिम्मेंदारी सम्हालना
26-	छाती मा कोदब दरब	परेशान करना ।
27-	टेटिआउब	कब्जे में करना
28-	टिहुन देब	पैर के गुठने से मारना ।
29-	डींठ लगाउब	नजर लगाना ।
30-	दाँत पीसब	गुस्सा प्रकट करना ।
31-	दाँत निपोरब	शर्म महसूस न करना ।

32-	नाक काटब	बेइज्जती करना ।
33-	नाक कटाउब	बेइज्जती करवाना ।
34-	नहा मा फाँस ठोकब	अति त्रास देना ।
35-	नाक मा गुस्सा होब	बहुत जल्द नाराज होना।
36-	पोंदी पइया देब	ऊपर चढ़ने के लिए सहारा देना ।
37-	पाँव उठाए रहब	हमेंशा तैयार रहना ।
38-	पियरी पहिरब	विवाह होना (लड़की का)
39-	पेटे मां दाँत होब	कपटी होना।
40-	पसीना बहाउब	कड़ी मेंहनत करना ।
41-	पेरुआ कस मुँह बनाउब	भावहीन होना
42-	बाँहू सकेलब	लड़ने की तैयारी करना ।
43-	माछी कस भुन्नाब	घृणात्मक क्रोध करना ।
44-	मुँह विचकाउब	घृणा करना ।
45-	मुँह बनाउब	असन्तुष्ट होना।
46-	मुँह फेरब	कोई रुचि न होना।
47-	मुँह ओरमाउब	उदास होना
48-	माछी चाहय खता	मन मुताबिक कार्य मिलना
49-	मूड़े मा सनीचर चढ़ब	आपत्ति आना
50-	लाल-पियर होब	अधिक क्रोधित होना।
51-	लाल-पियर देखाब	कमजोरी से चक्कर का आभास
52-	लिंगी मारब	अड़चन पैदा करना ।
53-	लतिआउब	उपेक्षित करना पैर से मारना ।
54-	सनकी मारब	चुपके से इशारा करना ।
55-	सरमेंट देब	सभी अंगो को समेंटकर मारना
56-	हाथ केर मइल	नगण्य होना

कुछ नए मुहावरे :-

1-	सूजी कस खेत गड़य	पानी की कमी की अभिव्यक्ति
2-	फरसा कस घाम	तेज धूप होना
3-	रोटी कइ बिरई	भूख मिटाने के लिए दबा की ओर संकेत
4-	भीतर तक पेट सिझय	भूखे मरना
5-	ओरहन कस देत फिरय	जली-कटी सुनाना
6-	ओरमाइस मुँह	उदास होना

7-	खेत का तिजारी भय	खेत की उत्पादन क्षमता का ह्रास
8-	गाँव या बेराम	सामूहिक रुग्नता का सूचक
9-	लइना कस बररिजाँय	क्रुद्ध होना
10-	आँखिन भर सामन हय	देखने मात्र को हरियाली
11-	बेधिगा कुकाम	कार्य बिगड़ जाने का पश्चाताप
12-	दुःख के गठरी दीन्हिस छोड़	दुःख का पिटारा खुलना
13-	खोजी परदा-पेट	असन-बसन की खोज
14-	लाल डब्बा	सरकारी गाड़ी इस मुहाबरे, की मार से सरकारी गाड़ी भी बंद हो गई ।

लोकोक्तियाँ (कहावतें)

लोकोक्ति संस्कृत शब्द है, जिसका अर्थ - लोक + उक्ति, समाज के लोगों द्वारा कहा गया कथन, जिसका निर्माण समय एवं परिस्थिति के अनुसार समाज में कर लिया जाता है। किसी भी देश की भाषा में लोकोक्तियों से जन आकांक्षा, जन प्रेम जन अनुभव जनद्रोह तथा जन कछाक्ष तीव्रतम रूप में सामने आते हैं; लोकोक्ति उन्हें व्यक्त करने का माध्यम है। लोकोक्तियाँ समाज का दर्पण या प्रतिबिम्ब होती है, जिनके द्वारा जन आकांक्षा बिना हिचाकिचाहट के सामने आती है। लोकोक्तियाँ चिन्तन दर्शन से भरी त्रैकालिक सत्य लिए जन्म मरण तथा इसके बाद की स्थिति को भी छूती है।

डॉ. राममूर्ति के शब्दों में --" लोकोक्ति पूर्ण वाक्य होती है। परिपक्व अनुभव को व्यक्त करने का सूत्रात्मक माध्यम लोकोक्ति में देखने को मिलता है।"

प्रो.आदित्य प्रताप सिंह को शब्दों में --"लोकोक्ति किसी वक्ता का वक्तव्य नहीं, वह जनता की संक्षिप्त, सार्थक और रुचिर अभिव्यक्ति है। इसमें गागर में सागर निहित रहता है।"

लोकोक्तियों के पीछे कोई न कोई घटना, कहानी जुड़ी रहती है, जो कभी समाज में घटित हुई होंगी। यदि लोकोक्ति की कहानी या घटना की जानकारी मिल जाय तो इन्हे समझना बहुत ही सरल हो जाता है तथा उनकी रोचकता बढ़ जाती है लोकोक्तियाँ संक्षिप्त एवं गहरी होती हैं। व्यंजनात्मकता, अनुभवों एवं विचारों का भण्डार होती है। चिकित्सक के नस्तर की तरह नुकीली एवं सूक्ष्म होती है। बघेली में इन्हें कहनूत, मसल, उखान या उक्खान कहते हैं। लोकोक्तियों के तीन भाग पाये जाते हैं--(1) लोकोक्तियाँ (2) पहेलियाँ (3) टहूका या चुटकुले ।

कुछ प्रमुख लोकोक्तियाँ एवं उनके भावार्थ -

1 अकेले स्याम बहू, सलगा गाँव फगुहार। : अकेला व्यक्ति समूह का मुकाबला नहीं कर सकता ।

2	अउसर बीते, मालिन गाबय।	:	कार्य समाप्ति के बाद उपलब्धि का महत्व नहीं होता ।
3	अपन हँथा, जगन्नथा।	:	स्वाबलंबी होना।
4	अँधरे के आगे, रोबय आपन दीदा खोबय।	:	मूर्ख से अपने मन की व्यथा कहना व्यर्थ है।
5	आधे गाँव मा दिया देबारी, आधे गाँव मा फाग।	:	विषम परिस्थितियाँ
6	आँखी न कान, कजरउटा नव ठे।	:	व्यर्थता की अभिव्यक्ति
7	आँधर आँखी पाबय त पतिआय।	:	उपलब्धि प्राप्त करने पर विश्वास होता है।
8	इया जेउनार से नीक त खाबय हय।	:	विशेष भोजन से अच्छा सामान्य भोजन होना।
9	एकय उदई एकय भान, न उनके चुँदईन उनके कान।	:	एक दूसरे जैसे परिस्थिति वालों का मिलना।
10	ओहिन कई नउआ नार, ओहिन कई ठाकुर दुआर।	:	एक ही साथ दो कार्य होना।
11	घामव लेब, अउ चिलरव मारब।	:	एक साथ दो कार्य करना ।
12	कदए मा गोड़ न बूड़य, सलगे चिनगबा मोरय आँय।	:	मेंहनत न करना पड़े परन्तु लाभ पूर्ण मिले।
13	कमाई केर नाव नहीं, हींसा लेय का पोहगर।	:	मेंहनत दूसरे करें, उपलब्धि हमें भी हो।
14	कढ़ी मुराई न मुरय, मुगउरा का हाँथ पसारय।	:	अपनी सामर्थ्य से अधिक कार्य करने के लिये तैयार होना।
15	काज कहँव लाग नहीं होइगा मटमगरा।	:	कार्य के पहले ही सिद्धि का स्वप्न ।
16	खबामय का पयार, रेगामय का रउहाल।	:	अधिक श्रम पर कम लाभ देना
17	खाली बानिन का करय, इया कुठली के धान उआ कुठुली धरय।	:	मेंहनती आदमी फुरसत के समय भी कुछ न कुछ करता रहता है।
18	कन्या हय कानी, बर गोड़ धरय ता जानी।	:	एक दूसरे जैसी स्थिति वाले निकम्में व्यक्ति के अति की ओर व्यंग्य।

19	गरियार चलय न, चलय त आर पेलय।	:	निकम्में व्यक्ति के अति की ओर व्यंग्य।
20	गाँव केर होइहा त जनतय होइहा, अन्तय के होइहा त अइत हे।	:	व्यक्ति को सजग करने एवं डराने का प्रयास ।
21	गुरू बाबा केर सीधा पहले के नहीं पटा, घोड़ी फेर देखाय लाग।	:	पूर्व की समस्या का समाधान नहीं हुआ, नई समस्या फिर से आ गई ।
22	गोरा बजबाही, कूकुर मरिगा आबाजाही।	:	अधिक परिश्रम के बाद उपलब्धि शून्य होना।
23	गोरइया बाबा पार लगाबा! कहिन हमहिन उतान हयन।	:	जो अपनी सहायता नहीं कर पाता। उससे सहयोग की मांग करना।
24	गुड़ खाय गुलगला से परहेज करय।	:	व्यर्थ का आडम्बर
25	घर मा भूँजी भाँग नहीं, मनुस मुगउरा का ठुनकय।	:	परिस्थिति को देखकर न चल पाना ।
26	घर के लड़िका गोही चाटय, मामा खाय अमाबट।	:	बाहरी व्यक्तियों के कारण निजी व्यक्तियों की उपेक्षा
27	का घन घसे से कुल्हरा होय, हाँ जब जबर घसइया होय।	:	परिश्रम करने पर असंभव कार्य भी संभव हो जाता है।
28	घरी मा घर ज़रय, अढ़ाई घरी भद्रा।	:	तत्कालिक कार्य को टरकाने का प्रयास।
29	चलनी मा दूध दुहय, कहय सनीचर लहटा हय।	:	अपना दोष दूसरों पर मढ़ना
30	चलतू बरदा के अरई नहीं लगाई जाय।	:	कार्य करने वाले व्यक्ति को उसकी इच्छानुसार चलने देना चाहिये।
31	ललहा पाइस पनही, ता जरबय-जरबय रेंगय।	:	लोभी को वांछित वस्तु मिलने पर उसका दुरुपयोग
32	जइसय हबा चलय, ओइसय पीठ करय।	:	समय के अनुरूप होना
33	जानय का न सानय का, कहिन तरी घिअइ घिउ हय।	:	बिना जानकारी के अपने आपको होशियार समझना ।
34	जय दिन चलय उधारा बाढ़ी, तय दिन काढ़ा काहे काढ़ी।	:	जो कार्य मुफ्त में हो रहा है उसके लिये अगला उपाय क्यों किया जाय।

35	जेखर जसइन बाप महतारी,ओखर ओइसन लड़िका। जेखर जइसन घर दुआर, ओखर ओइसन फरिका।	:	वंशानुक्रम एवं कर्म के अनुरूप परिणाम की ओर संकेत
36	जुआँ हारे मा, हर पहारे मा, जोतइया महतारी के पेट माँ।	:	असंगति जो आधुनिक जीवन पर घटित होता है।
37	टठिया न लोटिया, खाब दारय भात।	:	समय एवं परिस्थिति की ओर ध्यान न देना।
38	टठिया केर घिउ, दार मा कि भात मा।	:	आपसी लोगों में से कोई भी वस्तु किसी के पास हो अन्तर नहीं पड़ता।
39	डार के चूका बाँदर, बात के चूका मनई।	:	बंदर की डाल का चूकना तथा मनुष्य का बात से चूकना का महत्वहीनता की ओर संकेत।
40	तेली के तेल होय, त पहार नहीं चुपरय।	:	अधिक वस्तु होने पर दुरुपयोग नहीं किया जाता ।
41	दुधारू गइया के चार लात सहय पड़त हय।	:	लाभ प्राप्ति के लिये सहनशीलता आवश्यक है।
42	दिन भर माँगय त दिया भर, रात भर माँगय त दिया भर।	:	मेंहनत का उपलब्धि पर प्रभाव न पड़ना।
43	दूनउ दीन से गे पाड़े, न हलुआ मिलय न माड़े।	:	कुछ भी प्राप्त न होना।
44	धोई धाई गाड़र चहला मा परिगय।	:	स्वच्छ छविवाले व्यक्ति का कलंकित हो जाना ।
45	नमाइन के तुपकदार, मूड़े मा गोरसी।	:	कभी अवसर मिलने पर अधिक दिखावा करना।
46	नई नाउन बाँस के नहन्ना।	:	नौसिखिया का अवांछित विज्ञापन।
47	नाम लखेस्सर मुँह कूकुर कस।	:	गुण के विरुद्ध नाम होना।
48	निबल टेटुआ साँझय पलाद।	:	कमजोर व्यक्ति अपनी व्यवस्था पहले से करता है।
49	नमाइन के बूढ़ा कठाउता मा नहीं खाइन।	:	किसी भी स्थिति का सामना करने के लिये तैयार होना।

50	नाच परोसिन मोरे। त खरधर नाचवँ तोरे।।	:	जो जैसा करता है उसके अनुसार वैसा व्यवहार करना।
51	परोसी टरय कोलिया फराँक होय।	:	पड़ोसी के हटने से सुविधा प्राप्त होना।
52	पढ़य लिखय न एकउरती, नाम धराइन विद्यारथी।	:	गुण के विरुद्ध नाम होना।
53	पुन-पुन चन्दन पुन-पुन पानी। देउता सरिगे हम का जानी।।	:	पुनरावृत्ति पर कटाक्ष
54	पानी केर धन पानी मा। नाक कटी बेइमानी मा।।	:	जो जैसा कर्म करता है उसके अनुसार परिणाम भोगना पड़ता है।
55	बोलय का सहूर नहीं, चले हँय बिलाइत पढ़य।	:	योग्यता एवं दक्षता पर विचार न करना।
56	बुढ़ऊ के मरे केर दुक्ख न होय, जमराज केर लहटे केर आय।	:	एकवार के कार्य से परेशानी नहीं है; परन्तु अब यही क्रिया और सभी करने लगेंगे।
57	मुँह छछुन्दर नाम धराइन बइसुन्दर।	:	गुण के विरुद्ध नाम होना।
58	मुरगी खरीदय का पइसा नहीं, चले हँय हाथी के मोल करय।	:	अपनी स्थिति एवं हैसियत से आगे की बात करना।
59	मेंड़ परी नहीं, मगर उतराय लाग।	:	कार्य के पहले ही लाभ का बखान करना।
60	भले मार्‌या हम रोवइयँय रहेन हय।	:	परिस्थिति के अनुरूप तैयार रहना।
61	मेंहेरिया के धोतिया नहीं, बिलरिया के गाँती बाँधय।	:	अपनी स्थिति को न देखकर कार्य करना।
62	मोर पेट हाहू । मँय न देहँव काहू।	:	केवल अपने हित का ध्यान देना।
63	मूँड़े परे बजाये सिद्ध।	:	विवशता सब कुछ करा लेती है।
64	मूँड़े-मूँड़े लाठी चलय, कहिंन झगर होय चहत ही।	:	जो कार्य सामने हो रहा है उसके लिये गवाह की क्या आवश्यकता।

65	रहय रिसान, निहारय टठिया कई।	:	नाराजगी के साथ मनाये जाने की इच्छा रखना ।
66	रहय बुसउले मा, बात दरबारे के करय।	:	अपने सामर्थ्य से अधिक कार्य करने की इच्छा करना
67	राजन के घोड़े, सूमन मा जोड़े।	:	बड़ो के लिये छोटों का कोई महत्व नहीं होता।
68	लहटी गाय गोलइदा खाय । धाय-धाय मउहारय जाय ।।	:	पड़ी हुई आदत कभी भी नहीं छूटती ।
69	लोह जानय, लोहार जानय।	:	जो जिसका काम है, वही उसे समझता है।
70	सेंत का चाउर, मउसिया के सराध।	:	मुफ्त में मिली सम्पत्ति का दुरुपयोग करना अच्छा लगता है।
71	हाँथ न गोड़, चढ़इ का कइमोर।	:	स्थिति के विपरीत कार्य करना ।
72	हम हमई, बाप-पूत समई।	:	सब कुछ अपने लिये होना।
73	सोई साँपनाथ, सोई नागनाथ।	:	एक समान बुरा होना।
74	कूड़ खाय मूँड़।	:	राजसत्ता का ताज सिर की रक्षा नकर सिर का भक्षण करे।
75	परे रहय पेटकुइयाँ, चूँमय बादर।	:	सामर्थ्य से अधिक कार्य करने की चेष्टा करना ।
76	बीछी केर मंत्र न जानय,	:	छोटा कार्य न जाने बड़े कार्य के लिये प्रयास करें।
77	ससुरे जाय का होय त रोई, नहीं त कंडन का जई।	:	जिस कार्य की तैयारी है, हो तो ठीक है वरना हम अपना कार्य करे।
78	ददरे मा रास न भास, बलम उसनींदन मरिगे।	:	बहुत अधिक परिश्रम के बाद भी हाँथ कुछ न लगना ।
79	हार न जीत, पनही लागय बीचो-बीच।	:	क्रिया कलाप होने के बाद भी परिणाम न निकलना ।

80	कानी कुकुरिया लोह लगाबय, गय पिलवन के माथे।	:	करे कोई भरे कोई ।
81	आन का लोखरी सुदिन बताबय, अपना कुकरन से चोथबाबय।	:	दूसरो को उपदेश देना लेकिन स्वयं उसी समस्या से जूझना
82	हुसियार बातन से, त घोड़ा लातन से मारत हय।	:	होशियार उपाय से तथा ना समझ सीधे प्रहार करता है।

पहेलियाँ

पहेली को बघेली में किहनी कूट एवं बुझौबल भी कहते हैं। इसका क्षेत्र बहुत व्यापक है। पहेली यद्यपि स्वभाव से मुहाबरा और कहावत से भिन्न है, फिर भी लोकोक्ति साहित्य का अभिन्न अंग है। पहेली मनोरंजक तो होती है, साथ ही बुद्धि-विनोद या कोई न कोई गुत्थी लिए रहती है। उस गुत्थी को सुलझाने के कूट संकेत भी रहते हैं। इस तरह कहा जा सकता है कि पहेली किसी वस्तु का ऐसा संकेत चित्र है, जिसका वर्णन विभिन्न उपमानों के सहयोग से किया जाता है तथा इसका प्रमुख उद्देश्य मनोरंजन, एवं बुद्धि परीक्षण है। आकार की दृष्टि से पहेलियाँ, वाक्यांश, वाक्य एवं कई वाक्यों तक की पाई जाती है। पहेलियाँ व्यावहारिक होती है तथा व्यक्ति की मेंधा का परीक्षण करती है। यथा-

1. अरिया मा नाचय लोलरिया ।
2. अत्तिस कोठरी, बत्तिस दुआर ।
   नाचय चिमनी बहय दुआर ।
   कउन बरन मोर छुअय दुआर।।
3. आँख चिड़ी कस, पूँछ बिली अस, मुँह चितबा अस लाबा ।
   पेट हिरन कस, पीठ बाघ कस, गजब तमासा आबा ।।
4. ऊपर दउरिया, तरी दउरिया ।
   बीच मा नाचय लाल बहुरिया ।।
5. उज्जर बिलारी, हरियर पूँछ ।
6. उठय खोय ता उठ, नहीं घोंघा दबाई ।
7. ऊँच चउरबा भँइस बिआनी ।
   ओखर तेली बहुत मिठानी ।।
8. एक पेड़ दमदार ।
   बतिया लागय सउ हजार ।
9. एक खड़ी हय, एक पड़ी हय।
   एक दनादन, नाच रही हय ।।

10. एक पखेरू अइसा ।
    जेखे पूँछ मा पइसा ।।
11. एक खेत मा अइसा ।
    आधा बकुला आधा सुआ ।।
12. एक चिरइया बारह हाँथ,
    ओखर पूँछ अठारह हाँथ ।
    पानी पिअय पताल के,
    दउड़ी जाय अकास ।।
13. एक नारि ता रंगी-चंगी,
    उहव नारि कहबाबय ।
    नहाय धोय सज्जा पर बइठय
    लरिकन का ललचाबय ।।
14. एक ठे साँप के दुइ ठे मूँड़ ।
15. एक फूल-फूलय गुलाब केर,
    नगर मा ना राजा के बाग मा
    ना माली के फुलबार मा ।
16. एक टिकुरिया, नव हर चलयँ
    अउ टुम्मक ठइयाँ होय ।
    मारि कनेखा रेगि चली हय,
    दइया दइया होय ।।
17. एतना सुफेद हय, एहँ देस मा न होय ।
    अइसन-अइसन चीज खायेन फोकला न होय ।।
18. एक कुआँ मा थोर का पानी ।
    ओह मा नाचय लाल भमानी ।।
19. एक डिबिया मा पचास चोर ।
    पकड़ के मारय ता होय अँजोर ।।
20. ओही के रोटी, ओही के दार ।
    ओही के बांधय ठाट, टटिया देय दुआर ।।
21. करिहाँ कूबर, पेट बेमाई ।
    जे जानय ते, बड़ा उपाई ।
22. कटोरे के अंदर कटोर हय ।
    लड़िका बाप से गोर हय ।

23. काला हय, कलूटा हय ।
    काला ओनाए बइठा हय ।।
24. कूकर के पूँछ हमरे पास ।
    कूकुर भोंकय इलाहाबाद ।।
25. खइचत डोर, नदी घहराय ।
    कमल के फूल, अस उतराय ।।
26. खाने के हय साज में, जामें अच्छर तीन ।
    पहिल का अच्छा काटके, ब्याह सम्भु को दीन ।।
27. गघरी से हय निकरय ।
    तोहरे घरे झींगुर लोटय ।।
28. गली-गली चलत जाय ।
    गड़हा मा हाँथ डारे जाय ।।
29. गइल-गइल, चलत जाय ।
    उरई मा हाँथ, लगाबत जाय ।।
30. गोल-गोल होत ही ।
    लोहे से लड़त ही ।।
31. घोड़े के हय साज में जामें अच्छर तीन ।
    पहिल का अच्छर काट को, ब्याह राम को दीन ।।
32. चार खूँट कय चम्पा चिरई, बोलय मधुरी बानी ।।
    बीच समुद्र मा डुबकी मारय, पिअय का माँगय पानी ।।
33. चार कबूतर चार रंग ।
    बाहर निकरय एकय संग ।।
34. चाची के दुइ कान, चचा के कानय नहिं आय ।
    चाची बड़ी सुजान, चचा कुछ जनतय नहिं आय ।।
35. चीकन खेत, महीकन बिरबा,
    ओहिमा बइठय काला किरबा ।
    चीन्हा हो सरदार कि लरिकउ,
    कउन जनाउर आय ।।
36. छोटा बुदा, दादू, सगला घर ताकय ।
37. छोटा बुदा लड़िका, बोझा भर मुखारी करय ।
38. छोटबुदी टिल्लू मियाँ, बड़ी का पूँछ ।
    जहाँ जाय टिल्लू मियाँ, वहँय जाय पूँछ ।।

39. छोट बुदा लड़िका चंदन दये बजारय जाय ।
40. जबसे जनमय, तब से मरय ।
 सबके मूड़े मा, बास करय ।।
41. झूर कुआँ मा भूत भड़ भड़ाय ।
42. टठिया भर राई । सगले गाँव छितराई ।।
43. टेढ़ी-मेंढ़ी लकड़ी, बंगाला मोरा देस ।
 जान ले मोर किहनी, नहीं छोड़ मोरा देस ।।
44. टेढ़ी-मेंढ़ी झिटकी, पहार चढ़ी जाय ।
45. डुड़बा पीपर खूब फरा ।
 भगमान के आए झरिपरा ।।
46. तोर दिदी उपड़उर धरय ।
 तोर ददा फोर-फोर खाय ।।
47. थोर का खाय बहुत का चिल्लाय ।
48. थोर का खाय बहुत का उगिलय ।।
49. दिन के भरी, रात के छूँछ ।
50. दिन मा मरय, रात के जिअय ।।
51. देस दिखेन परदेस दिखेन ।
 पय घइला अस बरी, नहीं दिखेन ।।
52. देस दिखेन, परदेस दिखेन ।
 अउर दिखेन, कलकत्ता ।
 एक देस मा अइसन देखेन
 कि फर के ऊपर दुइ पत्ता ।।
53. देखय ता लाल-लाल, छुअय ता गुलगुल ।
 देख दिदी जिउ, काउन जानवरो आय ।।
54. नव सय बढ़ई, नव समय लोहार ।
55. काटी न कटाय, कइमा के डरार ।
 नहीं आय त खाय ले, होत ता का खाते ।
56. पथरा मा पथरा, पथरा मा कूड़ी ।
 पॉचउ भइया लउटि जा, हम जइत हय दूरी ।।
57. पूरुब दिसा से आई चिड़िया ।
 अन्न खाय पानी कय किरिया ।।
58. फरय न फूलय, छछरि भर जाय ।
 भउकी टूट बजरियन जाय।।

59. फल-फल करय, सुफल फल फरय।
    ना भुइयाँ गिरय, ना सुगना काटय।।
60. बड़े सकन्ने के पहरा आय।
    तोहरे घरे सुअर गुर्राय ।।
61. बोखरी गगरी,
    ना तोसे उठय, ना तोरे बाप से।
62. भन-भन करय, भमरा न होय ।
    हाथी-घोड़ के चउगुन रेगय, जिआ-जन्त न होय।।
63. यार बजारय जात हव, चीजय लइयो चार ।
    सुआ, महोखा, बाकुला, तीतुर की अनुहार ।
64. रात के खड़ा ।
    दिन के पड़ा ।
65. रात के भरी, दिन के छूँछ ।
66. लाल गइया बइठत जाय ।
    काली गइया उठत जाय ।।
67. सरकत आबय, सरकत जाय ।
    साँप न होय, बड़ा दइँदर आय ।।
68. सर्री सेमर बढ़िगय, बाड़ी ठाढ़ फुसाउ।
    तीस-तीस के लउदा लागे, बीहर-बीहर नाउ ।।
69. सब जने घर छोड़के चलेगे।
    बुढ़ऊ लटकेन रहिगे।।
70. हलना-झुलना तोर सूपा अस कान ।
71. हदा आई, होदा गय ।
72. हरियर हय । लाल रचय ।।
73. दुअरा से घर बाहर निकरिगा,
    घर बाली तड़पय ।

सैफू की पहेलियाँ

1. बिन पखना मेंड़राय सरग मा,
   रहय लपेटे सूत ।
   सैफू कहँय बताबा ककऊ,
   कउन आय इया भूत।।

2. चपटी देंह जेठ मा बाढ़ै,
गाय-भँइस धर खाय।
सैफू कहँय लड़य हाथी से,
कउआ देख डेराय ।
3. कमल फूल आकास मा
जर फोरय पाताल ।
सैफू कहँय, छाँह मा मनई,
फिरय बेहाल-बेहाल ।।
4. भेद पाय जोरगर बढ़य,
सब जनाय की छींक ।
सैफू कहँय परेम के मारे,
सब जन काढ़ँय कीक ।।

पहेली-उत्तर माला

1-	जिह्वा	2-	बर्रे का छत्ता	3-	गिलहरी
4-	मसूर की दाल	5-	मूली	6-	लोटा
7-	मधुमक्खी	8-	केला	9-	रोटी
10-	मोर	11-	मूली	12-	ढेकुर
13-	जलेबी	14-	नोई	15-	सूर्य
16-	बिच्छू	17-	नमक	18-	पूड़ी
19-	माचिस	20-	अरहर	21-	गेहूँ
22-	नारियल	23-	भटा	24-	बन्दूख
25-	मक्खन	26-	मुगौरी	27-	पोतना
28-	जेबा	29-	मूँछ	30-	सुपाड़ी
31-	गाँसिया	32-	मथानी	33-	पान-सुपाड़ी-कत्था-चूना
34-	कड़ाही-तबा	35-	पुस्तक	36-	ताला
37-	चूल्हा	38-	सुई-धागा	39-	उड़द
40-	बाल	41-	नारियल	42-	तारे
43-	रास्ता	44-	धुँआ/पहाड़ी रास्ता	45-	ओस
46-	रोटी	47-	बन्दूख	48-	बन्दूख
49-	अरगसनी	50-	दीपक	51-	कुम्हड़ा
52-	गूमी का फल	53-	लाल मिर्च	54-	छाया

55-	बण्डा बैल	56-	ग्रास	57-	अन्न का क्रीड़ा
58-	पान	59-	नारियल	60-	हाँथ की चक्की
61-	कुआँ	62-	कुम्हार का चाका	63-	पान-कत्था-चूना-सुपाड़ी
64-	गेरमा (पशु बाँधने की रस्सी)	65-	पशुशाला	66-	आग एवं धुआँ
67-	हल	68-	नारियल का पेड़	69-	ताला
70-	हाथी	71-	दृष्टि	72-	मेंहदी
73-	पानी-जाल-मछली				

उत्तर माला सैफू की पहेलियाँ

1- पतंग 2- किलनी 3- खजूर का पेड़ 4- हँसी

टहूका (चुटकुला)

टहूके एवं चुटकुले मनोरंजन करते हैं। टहूका 'टिहुक' से बना देशजशब्द है, जिसका अर्थ है-चौकाने की क्रिया या भाव/ टहूके या चुटकुले विनोद पूर्ण तथा मनोरंजन प्रधान होते हैं। टहूका का अर्थ है मीठी ठेस, कहीं कहीं इनमें हास्य के साथ व्यंग्य भी छिपा रहता है। यहाँ चुटकुले भले ही चोट पहुँचाने वाले होते हैं; परन्तु इनमें काव्यात्मकता होती है तथा रस से जुड़े रहते हैं।

बघेली के कतिपय नमूने दृष्टव्य हैं-

प्रश्न- कहाँ रही थे अपना ?

उत्तर- छाये गाँव, उठाये भीती।

प्रश्न- इया का आय ?

उत्तर- अनजान के पाँजर, पुँछइया के डाढ़ी।

एक मरीज ने वैद्य से पूछा-

बैद बाबा! गोड़ लुहुक गा हय कउनो दबाई बताई?

उत्तर- भुनगुटिया के नेउना, खरहा के सींग, माछी के मूँड़, पाथर के जर कूट के पुल्टिस बाँधा सब ठीक होइ जई ।

एक अर्द्ध बधिर पंण्डित भटा तोड़ रहे थे, तभी किसी जजमान ने पूछा-

जजमान- लड़िका-बच्चा कइसन हँय ?

पंडित जी- जातय भरता बनाउब ।

जजमान- पंडित जी कुछ असीस देई ?

पंडित जी- गिरा मुड़भरा, दाँत बत्तीसव टूटय ।

जजमान- इया बरदान आय कि सराप ?

पंडित जी– ता ले बरदान जा काँकरन कुल्ला कर ।

किसी अफसर ने किसान से पूछा- अपना कहाँ रहित हय?

किसान– हुजूर अपना के बाँसा माँ। बाँसा एक गाँव का नाम है तथा बाँसा में श्लेष एवं वक्रोक्ति भी है।

एक शिक्षक ने जिसे वे प्यार से धुजऊ कहते थे पूछा-

धुजऊ अँगरेजी काहे नहीं पढ़त्या आहूया ?

उत्तर - जउन बनत ही तउन का पढ़ी ।

प्रश्न- गणित काहे नहीं पढ़त्या आहूया?

उत्तर- जउन नहीं बनय तऊँ का पढ़ी ।

एक अर्द्धबधिर पंडित जी अपने खेत जा रहे थे, तभी एक ठाकुर साहब ने उनसे कहा -

पंडित जी! पायलागी ।

पंडित जी– टिटिहिरया जई थे ।

ठाकुर सा. पंडित जी ठीक से नहीं सुनेन का ?

पंडित जी– हाँ गइया भँइसी लगती हईं।

ठाकुर सा.- जरे तोहार कान ।

पंडित जी– महराज कुमार चिरंजू होंय ।

एक मालिक ने नव आगन्तुक नौकर से पूछा -

मालिक– तोर का नाव हय?

नौकर सबाव सेर ।

मालिक– केत्ता खाते हय?

नौकर– खरहा कुदाँव रोटी, हाँथी चराँवभात ।

मालिक– काम केत्ता करिहे ?

नौकर– सपने मा अउघात रहब ।

दो मित्र थे । वे आपस में बात कर रहे थे -

एक ने कहा- हमार बाबा एक ठे सार बनबाए रहे हँय जउन दस कोस लंबी रही हय।

दूसरे ने कहा- हमरे बाबा के लघे एक ठे बांस एतना बड़ा रहा हय जउने से बदरी का खोद देत रहें हँय ता पानी बरसि जात रहा हय ।

पहले ने कहा- न हो! ओही रक्खत कहाँ रहे हँय ।

उत्तर- तोहरे बाबा के सार मा ।

काव्य पक्ष

रस

भाव का पुष्टि रूप ही रस है, जिसे भावयोग भी कहा जाता है। भाव योग से अर्थ है (स्थायी भाव, विभाव, अनुभाव, संचारीभाव सबका मार्मिक समावेश)
रस के संबंध में विद्वानों के मत -

रस विवेचन का सर्वप्रथम श्रेय भरत मुनि को है। उन्होने अपने ग्रन्थ नाट्यशास्त्र में रस की व्याख्या की तथा इसे सूत्र में बाँधा । इनके अनुसार "विभावानुभाव- व्यभिचारि- संयोगद्रस निष्पत्ति :" अर्थात् विभाव, अनुभाव और संचारीभाव के संयोग से रस की नि-पत्ति होती है। भरत मुनि का नाट्यशास्त्र साहित्य, संगीत और नाट्यकला का दर्पण है। आचार्य विश्वनाथ ने "साहित्यदर्पण" नामक ग्रन्थ में स्पष्ट करते हुए लिखा है --"सहृदयों के हृदय का स्थायीभाव जब विभाव, अनुभाव और संचारीभाव का संयोग प्राप्त कर लेता है तो रस निष्पत्ति हो जाती है।" इस प्रकार रस के स्थायीभाव, विभाव और अनुभाव तथा संचारीभाव प्रमुख अवयव है, तथा इन चारों के मिलने से रस की नि-पत्ति होती है। रस के प्रमुख अंग-

1:- **स्थायीभाव** :- स्थायीभाव मनुष्य के हृदय में सर्वदा विद्यमान रहते हैं और अनुकूल परिस्थिति आने पर व्यक्त हो जाते हैं, इनमें निम्नलिखित विशेषताएं पाई जाती हैं-

(अ) यह रस का मूल है जो बीज के समान अंकुरित होकर रस के रूप में पर्णित होता है।
(ब) यह सदा किसी न किसी रूप में अवश्य विद्यमान रहता है।
(स) स्थायीभाव मानवीय भावना के संस्कार है, जो मिट्टी के गंध की तरह छिपे रहते हैं तथा अनुकूल परिस्थिति आने पर उद्दीप्त हो उठते हैं।
(द) स्थायीभाव की मौजूदगी सदा बनी रहती है।
(इ) स्थायीभाव अन्य भावों को भी अपने में विलीन कर लेते हैं।

2:- **विभाव** :- स्थायीभाव को सचेष्ट करने वाले कारक विभाव कहलाते हैं। यह पूरा नाना नाम रूपात्मक जगत विभाव के अन्तर्गत आता है। प्रकृति वातावरण, समाज, देश तथा स्त्री-पुरुष का रूप चित्रण आदि आता है तथा विभाव भाव के उद्रेक का कारण होता है। विभाव के दो भेद हैं - (क) आलम्बन (ख) उद्दीपन ।

(क) आलम्बन विभाव :- जिसके सहारे रस की नि-पत्ति होती है उसे आलम्बन विभाव कहते हैं। इसके भी दो भेद हैं-

(अ) आश्रय – (विषयी) – जिस पात्र के हृदय में भाव जागृत होते है वह आश्रय कहलाता है।

(आ) विषय – जिस पात्र के प्रति भाव जागृत होते है, वह विषय होता है। इस विषय रूप आलम्बन विभाव को ही आलम्बन कहते हैं।

जब दोनों में भाव उठते हैं तो दोनों एक दूसरे के आलम्बन और आश्रय हो जाते हैं। पहले दुष्यन्त शकुंतला को देखता है, इसलिए दुष्यन्त आश्रय और शकुन्तला (विषय) प्रेम आलम्बन है। बाद में शकुंतला के हृदय में भी भाव जागृत होते हैं, तब दोनों एक दूसरे के आलम्बन और आश्रय हो जाते हैं।

उद्दीपन विभाव :- वे स्थितियाँ या बस्तुएँ जो स्थायीभाव को तीब्र (उद्दीप्त) कर आलम्बन योग्य बनाकर रसावस्था तक पहुँचाती है, उन्हें उद्दीपन विभाव कहते हैं। उद्दीपन विभाव के दो भेद हैं –

(अ) आलम्बनगत :- कविता की विषयवस्तु (विषय की चेष्टाएँ)

(आ) वाह्य अर्थात् वातावरण से संबंधित बस्तुएँ, प्रकृति दृश्य भी इसी के अन्तर्गत आते हैं।

3:- अनुभाव :- आश्रय की चेष्टाएँ ही अनुभाव है। स्थायीभावों के पैदा होने के बाद जो चेष्टाएँ आश्रय के द्वारा की जाती हैं, उन्हें अनुभाव कहते हैं। बिहारी के दोहे "कहत, नटत, रीझत, खिझत, मिलत, खिलत, लजियात" नमूने को लिया जा सकता है। अनुभावों के चार भेद हैं –

1:- आंगिक – शारीरिक चेष्टाएँ

2:- वाचिक- वचन या भाषिक चेष्टाएँ

3:- आहार्य- दूसरों को अपने ऊपर आरोपित करना जैसे मूलपात्र को नट द्वारा अपने आपमें आरोपित करना।

4:- सात्विक – मानसिक मनोभाव। स्थायीभाव जागृत होने पर स्वाभाविक रूप से किया गया अंग विकार। इनकी संख्या आठ (8) है।

1- स्तम्भ, 2- स्वेद, 3- रोमांच, 4- स्वरभंग, 5- कम्प, 6- विवर्णता, 7- अश्रु, 8- प्रलाप ।

4:- संचारीभाव :- कुछ भाव ऐसे होते हैं जो क्षण भर के लिए आते हैं और स्थायीभाव को पुष्ट कर फिर विलीन हो जाते हैं। जैसे समुद्र की उठी हुई लहर उठकर पानी में विलीन हो जाती है, उसी तरह संचारीभाव भी समय आने पर उठते हैं और वहीं क्षण भर में विलीन हो जाते हैं। एक स्थायीभाव के साथ कई संचारीभाव साथ-साथ चलते हैं। इनकी संख्या 33 मानी गई है जो निम्नानसार है –

1- निर्वेद, 2- ग्लानि, 3- शंका, 4- असूया, 5- मद, 6- श्रम, 7- आलस्य,

8- दीनता, 9- चिंता, 10- मोह, 11-स्मृति, 12- धृति, 13- ब्रीड़ा, 14- चपलता, 15- हर्ष, 16- आवेग, 17- जड़ता, 18- गर्व, 19- विषाद, 20- औत्सुक्य, 21- निद्रा, 22- अपस्मार, 23- स्वप्न, 24- विवोध, 25- अवमर्ष, 26- अवाहित्था, 27- उग्रता, 28- मति, 29- व्याधि, 30- उन्माद, 31- मरण, 32- त्रास, 33- वितर्क ।

रस के प्रकार

1- श्रृंगार रस- स्थायीभाव- प्रेम या रति/ रति का पु-ट और परिष्कृत रूप श्रृंगार रस है। श्रृंगार रस को रसराज कहते हैं। तथा इसका क्षेत्र बड़ा है देहरति से लेकर भगवत रति तक इसका प्रसार है। इसके दो पक्ष होते हैं-

1- संयोग श्रृंगार-

"पइरा मा
पखना लगे भइकरा
साँसन मा सासन के बइहरा
फेर
पइरा भा
जिउ पइरा ।" आ.प्र.सिंह

2- वियोग श्रृंगार -

"मै पतझार की डार पिया ।
तुम उआ बनके पहार ।।
जहँ चन्दन करै गुलजार ।
जहँ बेला करै भिनसार ।।
कोइल होइके गाबा हो ।
दखिन पबन होइ आबा हो ।।
मुरझी बउँड़ी का जइसे,
पबन उठाबय ।
मोरि बाँह उठाबा हो,
आबा हो! आबा ! आबा हो!" (अनाम)

पहले वात्सल्य को भी श्रृंगार रस के अन्तर्गत गिना जाता था । इसका क्षेत्र बहत व्यापक है। इसके अन्तर्गत (1) दाम्पत्य रति (2) भगवत प्रेम (3) बच्चों के प्रति स्नेह भाव (4) देश रति और ग्राम रति (5) प्रकृति प्रेम आते हैं इसी से इसे रसराज कहते हैं।

2:- **करूण रस** :- स्थायीभाव-शोक/शोक का पुष्ट और परिष्कृत रूप करूण रस है। यथा-

"गोली चुकी धौं
बारूद चुकी सब
डइना टूट लटकाये फिरै
बतख एक ररै।" (अनाम)

करुण और विरह में अंतर :- करूण में आँसू चलते हैं और विरह में भी । वियोग का स्थायीभाव प्रेम ही रहता है। यदि विरह शोक में बदल जाय तो वियोग करुण रस में ढल जाएगा । विरह में कभी-कभी मृत्यु दशा का भी संकेत मिलता है; किन्तु स्थायी भाव भिन्न रहते हैं। भवभूति ने करूण को ही सर्वोपरि रस माना है।

3:- हास्य रस :- स्थायी भाव- हँसित व्यंग्य विनोद। हास का परिष्कृत रूप हास्य रस है। प्रो. आदित्य प्रताप सिंह के शब्दों में -"व्यंग्य और विनोद रबड़ (रबर) है जो बिना खून-खच्चर के दोषों को मिटाता है।"

"भइसिन का देइत चारा अउ बूसइ नगद रहा।
एँह दार भात से त हमका, ठूसइ नगद रहा।।
दुलही मिली सुपनखा, सरस रात दिन रेढ़इ,
एँह काज से त हमका, रडूसइ नगद रहा ।।"

(शिवशंकर मिश्र 'सरस')

जिस व्यंग्य में विनोद नहीं रहता उसमें द्वेष आ जाता है। विनोद ग्रामीण में तथा व्यंग्य शहरी जीवन में अधिक पाया जाता है।

"या जमाना का देखि के,
हमहिं बड़ा गिल्यान लागत हय।
लड़िका ता हय हमार बीस के,
पय हमहिंन का बुढ़ान लागत हय ।।
खबायन पिआयन खूब निकहां-निकहां,
पय कोजानी काहे दुबरान लागत हय।।
घरे मा क्रीम-पाउडर केर कमी नहीं आय,
पय कोजानी काहे खउटान लागत हय।।"

(राजेश सिंह)

4:- रौद्र रस :- स्थायी भाव-क्रोध । क्रोध का परिष्कृत रूप रौद्र रस है। क्रोध एक फुर्तीला भाव है, जो कई भावों से मिलकर काम करता है। जैसे गरीब व्यक्ति को यदि कोई सता रहा है तो दयाभाव होगा और सताने वाले के प्रति क्रोध का भाव होगा । पुराना क्रोध बैर का रूप धारण कर लेता है।

"भरि-भरि मूठी मा माटी लइ,
चिल्लाइ परे माथे लगाइ ।
जे हमरे भुँइ पाँव धरी,
ओका हम कच्चइ लेब खाइ।।" (गोमती प्रसाद विकल)

लोकहित के लिए क्रोध मंगलकारी हो जाता है। वेदों में क्रोध का मन्यु कहा गया है।

5:- **बीर रस** :- स्थायीभाव-उत्साह । उत्साह का परिष्कृत रूप बीर रस होता है। बीर रस में कठोर वर्णो का प्रयोग होता है, लेकिन यदि उत्साह का भाव है तो बीर रस का परिपाक होगा, चाहे कठोर वर्ण हो या न हों।

"लहरन के मस्ती के मारे,
हमरे किस्ती का चैन नहीं।
पर हमरे किस्ती के मस्ती ता देखा,
लहरन पर लहर उठावत ही ।
उठि हर बेर इहै, हर लहर से कहति ही,
तोहरे किस्ती के मारे ता लहरन का चैन नहीं।" (आ.प्र.सिंह)

6:- **भयानक रस** - स्थायीभाव-भय। भय का परिष्कृत रूप भयानक रस है।

"पुनि उठा कलंदर के भाला,
लपका फन काढ़े हइ काला ।
नायक के छाती मा सकान,
लोहुन-लोहू सबतर देखान ।
सब भगे सिपाही लइ परान,
भगदर मा बस धूधुर देखान।' (गोमती प्रसाद विकल)

7:- **वीभत्स रस** :- स्थायीभाव-घृणा । घृणा का परिष्कृत रूप ही वीभत्स रस है।

"कटे-अधकटे-फटे-सटे,
भइ रन मा मार-काट भारी ।
पी-पी-कइ गरम-गरम लोहू,
सब लाल-लाल होइ गई कटारी।" (गोमती प्रसाद विकल)

8:- **अद्‌भुत रस** :- स्थायीभाव विस्मय (आश्चर्य) । आश्चर्य का परिष्कृत रूप अद्‌भुत रस है।

"खनरा नहीं तलाब कहूँ ठे, मगर झट्ट-पट्ट उतरान।
लुहुर-लुहुर अइसन आतुरता, चातुरता के काटे कान ।।
नाचत -कूदत लहय न निंचउ, कहइ कि अंगना टेढ़ जनाइ ।
इया मेंरि जे करइ अभावटि, उआ गुनी बेढ़न के जाइ।"
(रामलखन शर्मा निर्मल)

9:- **शान्त रस** :- स्थायीभाव-विराग (निर्वेद) । विराग का परिष्ठकृत रूप शान्त रस है।

"माटी के धन माटी होइगा,
माटी लइके मूठी मा ।
चमकदार हीरा कस होइगा,
जड़िगा नई अंगूठी मा ।।" (गोमती प्रसाद विकल)
"इया संसार कागज के पुड़िया,
बूँद परे घुरि जाए रे।"

10:- **वात्सल्य रस** :- स्नेह (छोटों के प्रति स्नेह का भाव) स्नेह का परिष्कृत रूप वात्सल्य रस है। इसके दो भाग हैं-

1- स्नेह का संयोग - "ओस मा भींज गेंद
फरिका मा परी
बिटिया के गेंद मिली।" (आ.प्र.सिंह)

2- वियोग वात्सल्य -
"पुनि-पुनि पूत केर मुँह चूमिस,
धरिस मूड़ पर आँचर ।
बिदा मउत के मइके कीन्हिस।
छाती पर धइ पाथर।।" (गोमती प्रसाद विकल)

छंद

भाव प्रेरित यति, गति और लय से युक्त रचना को छंद कहते हैं। यति विश्राम है, गति चाल है, लय ताल (रिदम) है तथा तुक (चरणान्त को वर्गो का मिलान) (राइम) है। भाव तेज होने पर गति तेज होगी, कम होने पर कम होगी। भाव का वेग ही सबको निर्धारित करता है। भाव सॉस है, वायु है। यदि भाव ही ठिठुर जायेंगे तो सब व्यर्थ होगा। लय तीन प्रकार की होती है - (1) भाव की लय (2) भाषा की लय (3) अर्थ की लय। जब तीनों लयों का उपयोग होगा तभी कविता ठीक होगी। लय भीतरी और बाहरी भी होती है। तीनों लय तिपाई की तरह हैं, यदि इनमें से कोई एक टूटी तो तिपाई गिर जायेगी। लयहीनता का नाम दुर्घटना है। लय टूटी की दुर्घटना घटी।

छंद एवं लय में संघर्ष भी होता है, यदि भाव छन्दहीन हो जायेगा तो अखबारी जो जायेगा। भाव का जो स्वर है, वह छन्द को खोजता है, छन्द स्वर को खोजता है। कहीं-कहीं भाव की दृष्टि से छन्द छन्द होते हुए भी छन्द नहीं होता। छन्द की जो गति क्रिया है या जो गतिशील चेष्टा

है वह रूप-विन्द्रूप और नवरूप में समेंटी जा सकती है।

छंद के लिये कहीं-कहीं वृत्त शब्द का भी प्रयोग किया जाता है। अंग्रेजी में इसे 'मीटर' तथा उर्दू में इसे 'बहर' कहते हैं। छंद का संबंध शैली और अभिव्यक्ति से भी है। कविता तुकान्त, अनुकान्त या मुक्त छन्द की ही होना आवश्यक नहीं है; परन्तु छंद आवश्यक है। डॉ. जगदीश प्रसाद कौशिक छन्दों की संख्या के बारे में अपने छन्द शास्त्र के पृ:ठ छन्द/15 में लिखते है कि प्राकृत पैगलम् के अनुसार --"एकक्षरात्मक छन्द से 26 अक्षरों वाले छन्दों की प्रस्तार संख्या तेरह करोड़ बयालिस लाख सत्रह हजार सात सौ छब्बीस होती है। शेष छन्दों की बात पृथक रह जाती है। इस प्रकार स्पष्ट है कि छन्द शास्त्र की दृष्टि से कवि किसी भी रूप में लिखता है, वह निश्चय ही कोई न कोई छन्द अवश्य ही होगा।"

कुछ विद्वान नये प्रयोगों को अजनबी कहकर भागते हैं और उन्हें उड़ा देने की कोशिश करते हैं; किन्तु विज्ञान और साहित्य में यदि नये और रचनात्मक प्रयोग न हों तो जीवन-जगत और समाज में एक तरह की निर्जीवता एवं निर्गति का साम्राज्य हो जायेगा । ध्यान देने योग्य है कुछ भाषाओं में 'सिलेबल' धर्मी छन्द होते हैं; परन्तु हिन्दी सिलेबुल धर्मी नहीं है। कविता और छन्द एक दूसरे के बिना अपूर्ण है। इन दोनों में आत्मा और शरीर का नाता है।

छन्द के भेद - (1) मात्रिक (2) वर्णिक

1:- **मात्रिक** :- जिन छन्दों में लय, गति एवं चरणों की गणना मात्राओं के आधार पर की जाती है, वे मात्रिक छन्द कहलाते हैं।

2:- **वर्णिक** :- जिन छन्दों में लय, गति एवं चरणों की गणना वर्णो के क्रम के आधार पर की जाती है वे वर्णिक छन्द कहलाते हैं।

मात्रिक एवं वर्णिक दोनों प्रकार के छन्दों के तीन तीन भेद होते हैं। यथा-

1- संवृत :- जिन छन्दों में सभी चरणों में मात्रा/वर्ण बराबर होते हैं, उन्हें संवृत कहते हैं।

2- अर्द्ध संवृत - जिन छन्दों के पहले और तीसरे चरण तथा दूसरे और चौथे चरण में मात्रा/वर्ण समान होते हैं, उन्हें अर्द्ध संवृत कहते हैं।

3- विषम वृत- जिन छन्दों के सभी चरणों में मात्रा/वर्ण अलग-अलग होते हैं, उन्हें विषम वृत कहते हैं।

मात्रा-मात्राएँ दो प्रकार की होती है - (1) लघु (2) गुरू

1- **लघु या ह्रस्व** :- जिन वर्णो के उच्चारण में कम समय लगता है उन्हें लघु (1) से चिन्हित करते हैं। जैसे-अ, इ, उ, लघु मात्रा वाले वर्ण होते हैं; परन्तु काव्य में कभी-कभी दीर्घ वर्ण भी उच्चारण की अल्पता के कारण लघु वर्ण माने जाते हैं कवि अपनी सुविधा के अनुसार भी मात्राओं में छूट पा जाते हैं।

2- **गुरू या दीर्घ** - जिन वर्णो के उच्चारण में अधिक समय लगता है, उन्हें गुरु (ऽ)

से चिन्हित करते हैं। यदि किसी लघु वर्ण के बाद स्वर रहित वर्ण आया हो तो पूर्व वाले वर्ण की गणना दीर्घ या गुरू (ऽ) वर्ण में की जाती है।

गण :- लघु और दीर्घ की गणना वर्णिक छन्दों में भी होती है; परन्तु तीन वर्णों के समूह में वर्णों का समूहीकरण किये जाने की दृष्टि से इसमें आठ गणों का निर्धारण किया गया है जो लघु और गुरु या केवल लघु या केवल दीर्घ के योग से बनते हैं, जिसको जानना आवश्यक है; क्योंकि इनकी जानकारी के बिना वर्णिक छन्दों की पहचान नहीं हो सकती है। गणों का परिचय इस प्रकार है। स्मरण रखने के लिए इन्हें 'मन भय जरसत' तथा गणों की मात्राओं की जानकारी प्राप्त करने के लिये यमाता राजभान सलगा सूत्र का उपयोग किया जाता है। यथा-

गण	मात्रा
यगण	।ऽऽ
भगण	ऽऽऽ
तगण	ऽऽ।
रगण	ऽ।ऽ
जगण	।ऽ।
भगण	ऽ।।
नगण	।।।
सगण	।।ऽ

मात्रिक छन्द- बघेली में पाये जाने वाले प्रमुख मात्रिक छन्द -

1- चौपाई - चौपाई में चार चरण या दो अर्द्धाली होती है। दोनों अर्द्धालियों की तुक अलग-अलग होती है। प्रत्येक चरण में 16 मात्राएँ होती हैं। अंत में दो गुरु या दो लघु आवश्यक है। यथा-

"आपन सोच कही हम का-का । मनई तीलय सउँहय चाका।।
फुर अउ झूठ न जानय पाई । सबहिन का समझी हम भाई ।।"
(ह.ब.सिंह)

2- चौपई - चौपई छन्द चौपाई की तरह चार चरणों वाला होता है; परन्तु इसके प्रत्येक चरण में 15 मात्राएँ होती हैं। यथा-

"लगी कटाई अट्टाटोर । होय बधौंही बाइत जोर ।।
बोय रहे खेत सब उचहन। तब जाना कि लगिगा अगहन ।। (बैजू)

3- दोहा - दोहा के प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं। प्रथम एवं तृतीय पद में 13-13 एवं द्वितीय तथा चतुर्थ पद में 11-11 मात्राएँ होती हैं। चरणांत में तुक मिलती है तथा गुरु लघु होता है। यथा-

"चिरइन कै आरव मिला, तरई भै मुँहचोर।
ललछर धोती टारि के, झाँकै गोर अँजोर।।" (कालिका त्रिपाठी)

4- सोरठा - सोरठा दोहे का उल्टा छंद है। इसके प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ तो होती हैं; परन्तु प्रथम एवं तृतीय चरण में 11-11 तथा द्वितीय एवं चतुर्थ चरण में 13-13 मात्राएँ होती हैं। प्रथम एवं तृतीय पदों की तुक मिलती है। चरणांत में लघु होना आवश्यक है। यथा-

किरबन के जिउ लेत, मकरी जाला बिनत ही।
अपनेन का हति लेत, एक दिन अइसन होत हय।। (सू.भा.सि.)

5- कुण्डलिया - कुण्डलिया (छः) चरणों वाला संयुक्त छंद है, जिसके प्रथम दो चरण दोहा के तथा अंतिम चार चरण रोला के होते हैं। इसके प्रत्येक चरण में 24 मात्राएँ होती हैं। प्रथम दो चरणों में 13-11 पर विराम तथा अंतिम चार चरणों में 11-13 पर विराम होता है। दूसरी पंक्ति का चरणांत तृतीय पंक्ति के प्रारम्भ में आता है तथा अंत में प्रारंभ शब्द की पुनरावृत्ति होती हैं। यथा-

"काजर बुढ़िया लइअया, जो तुम जया बजार ।
काकी बोली भुकुरि के, काका रहा चुपार ।।
काका रहा चुपार, गाजि अस मार फलाने ।
सउख बुढ़ाईदार, केर जब पाइस जाने ।।
कह 'शम्भू' भइ साठ, बरसि के जद्दपि डागर ।
चली होय जबान, आँजि के बुढ़िया काजर ।।" (शम्भू काकू)

(2) वर्णिक छन्द

(1) हाइकू - (नट भंगिमा) 5-7-5 वर्ण के क्रम से लिखी जाने वाली एक साँस की ऐसी कविता है, जिसमें दो विरोधी बिम्बों के द्वारा अप्रत्यासित सौन्दर्य, संवेदना अथवा कोई सजीव भंगिमा प्रस्तुत की जाती है; किन्तु विरोधी बिम्ब अनिवार्य नहीं है। अतिशय अलंकरण एवं जड़ मुद्राओं से हाइकू को परहेज है। यथा-

"ठिठुरी हम
खेतौ ठिठुरा होई
सोई का सोई ।।" (आ.प्र.सिंह)

यहाँ खेत और किसान में समभाव है।

(2) सिनरिउ - (कशाकाव्य) 5-7-5 के वर्ण क्रम से लिखा जाने वाला हाइकू की पैरोडी है, जिसमें एक तीखा तेबर, एक कटाक्ष, यथार्थ का एक नुकीला अंश अथवा बिच्छू का डंक निहित रहता है। यथा-

"फून कहिस
बरदी से कुछ का
मिटिगा खून।।" (अ.प्र.सिंह)

फोन में किसी उच्च्य अधिकारी ने पुलिस से कुछ कहा और खून का दाग मिट गया। वह पकड़ा नहीं गया या अभियुक्त बरी हो गया ।

(3) **जापानी तॉका** (लघु गीत) 5-7-5-7-7 वर्ण के क्रम से लिखा जाने वाला 31 वर्णो का छन्द है, जिसको दो अंतिम पंक्तियाँ छोड़ देने से हाइकू बन जाता है। यथा-

"आगी के कूँड़
पहिरे पहाड़ी धौं
निकरा मूँड़
रंगा पीपर डूँड़
चलैं लगड़ौ लूल।।" (आ.प्र.सिंह)

(4) **फ्री तॉका गुच्छ** (रेंगा) - तॉका का अर्थ है लघुगीत । यह 5-7-5-7-7 वर्ण के क्रम से सिलेबुल (ओंजो) क्रम से लिखा जाता है। भारत में यह जापानी छंद सिलेबल धर्मी न होकर वर्णिक छंद हो गया है। यथा-

"उजड़ा तन
बसिगा बस मन
साथ रहत
मन बहुत मानै
पै अजनबी कस ।।" (आ.प्र.सिंह)

(5) **कोरियाई सिजो** (लघु सम्बोध गीत) - सिजो का अर्थ है समयों के स्वर। कोरियाई सिजो 43 से लेकर 45 वर्णो के अन्तर्गत लिखा जाता है। कोरिया में यह सिलेबुल होता है; किन्तु हिन्दी सिलेबुल धर्मी नहीं है। इसलिए यहाँ वर्ण गिने जाते हैं। यह एक छोटी नज्म है। यथा-

"तरइन के
मसहरी मा
मुँह भर पड़ा/बंजर
चाँद मामा/ के
हाँथ-गोड़/लइगे
सब मच्छर
धौं पुन दंत निसाचर ।।" (आ.प्र.सिंह)

(6) **मतगयंद सवैया**- चार चरणों वाला छन्द है, जिसके प्रत्येक चरण में 23 वर्ण होते हैं, जिनमें क्रम से 7 भगण (ऽ।।) तथा अंत में दो गुरू (ऽऽ) पाये जाते हैं। यथा-

'बैहर तात बहै हहरात गिरै झरिपात चलैं जब रेरा।
सूखि चले बिरबा बिरई चिरई भगती हइ छाड़ि बसेरा ।
शंभु कहैं नहि दीख कबौं असजोर बहै जस लाग बड़ेरा ।
सूखि चले नदिया तलबा जलबुन्द मिलै नहि जो कहुँ हेरा ।।"

(शम्भू काकू)

सवैया के विविध प्रकारों का प्रयोग बघेली कवियों ने नहीं किया है। बहुत कविताएँ

बघेली में सवैया के नाम से लिखी गई है; परन्तु वे सवैया के अन्तर्गत नहीं आती।

मुक्त छंद

हिन्दी कविता में मुक्त छंद का जनक 'निराला' को माना जाता है। हिन्दी के कई विद्वानों ने मुक्त छंद को विषम छंद स्वीकार किया है। इस प्रकार वह छंद जो सभी चरणो में भिन्नता रखता है विषम छन्द है, जिसे मुक्त छंद के नाम से जाना जाता है।

मुक्त छंद में लय पर जोर रहता है; क्योंकि लय में संगीतात्मकता एवं काव्य सौंदर्य होता है। यह स्वीकार किया गया है कि मुक्त छंद में कविता प्रवृत्ति से मुक्ति पा जाती है और इसी मुक्ति के कारण कवि चरण एवं मात्रा में परिवर्तन कर नये छंदो का निर्माण कर लेता है। निराला के पूर्व भी बघेली में मुक्त छंद मिलते हैं। यथा-

"धरती क म्याना बनबाबा छयल
बदरे का ओहार
चन्दा का बेदी मगाबा
गमने हम जाब।"

मुक्त छंद छंद की भूमि पर स्वच्छन्द होता है। इसमें तुक का आग्रह नहीं रहता वरन लय पर सारा जोर रहता है। पानी की लहर की तरह प्रत्येक पंक्ति कोई छोटी और कोई बड़ी रहती है तथा दूर जाकर लहरें मिलती हैं। बघेली में मुक्त छन्दों के अन्तर्गत भी कई विधाओं में काव्य का सृजन किया गया है। यथा-

1:- **नवगीत** - गीत सुख-दख के निबिड़ भावों की संक्षिप्त अभिव्यक्ति होती है। नवगीत भी गीत है; किन्तु नई कविता के तोड़ में जब लोकधन में कुछ उर्दू का लब्जा आकर मिलता है तो वह नवगीत बन जाता है। यथा-

"चिरइया के जाग जरै नैना
आखिर रात कहै ना
फुससुँधी मन मोर उपासा
देंह के आगी मा
पेट का पाँसा
खउलत आगी का डइना
चिरइया के जागजरै नैना ।।"

2- **अगीत**- अतुकान्त गीत है। अगीत की पंक्तियों में बहुत अधिक वैषम्य पाया जाता है। यथा-

"चढ़ी पाढ़ उतरिगै
बाढ़
हड़री जुहान कउआ
चुनै-
पुन-पुन चितबै।।" (आ.प्र.सिंह)

3- **नवगजल** – इसका अर्थ है 'दिलरुबा से बातचीत' किन्तु नई गजल केवल रूमानी न रहकर यथार्थ की ओर भी झुक गई है। यथा-

"चाँदनी मा नहाइ देखा हो।
कोर भर मुस्कियाय देखा हो।।
देखा, देखि-देखि के चन्द्रमा कइसन,
कोर भर मुस्कियाय देखा हो।।
देखा बउरान उआ बुढ़ऊ हइ,
देखइ, बत्ती जराइ देखा हो।।
'चित्रेश' एक फूल टाढ़ बगलइ मा,
देखि-देखि झूमि जाइ देखा हो।।" (चित्रेश चित्रांशी)

4:- **नवीन सानेट** - चौदह पंक्ति का एक गीत होता है। कुछ विद्वान उसकी उत्पत्ति गजल से मानते हैं तो कुछ इसे स्वतंत्र मानते हैं। सानेट में तुकान्तरो का प्रयोग मिलता है। जैसे--"शेक्सपियर" और जर्मन कवि 'रिल्के' के सानेटो में अन्तर है। बँगला में इसे 'पयार' और हिन्दी में चतुर्दशी कहा जाता है। यथा-

"छाबा जोर सोर केर सन्नाटा
डालर उपाटे चउँह उपाटै सबके चूँद
बजार भाव मा बंद सबके कूँद
काहे का अउर उबाबै सोने के चाँटा
मुँह पकड़े भोपू हाथ पकड़े झंडा
जूता चाबै कूड़ खाय मूड़
देस विदेस सब का सोने के डंडा
महेस के तिरसूल कहाँ गनेस के सूड़
मानबाधिकार धौ दानबाधिकार
सब्द कुछ अरथ कुछ लोखड़फन्द
जनबजूद के बिरुद्ध जारी बारूद सभा
गैड़ा के सींग उगी फफूद के डींग गद
साँस चली पीर जगी पुखता भरान्ति
जागत कबि मागत लेई देई करान्ति।।" (आ.प्र.सिंह)

5:- **लघु और नाति दीर्घ मुक्त छन्द** - मुक्त छंद होने के कारण यह अतुकांत है; किन्तु लायात्मकता पाई जाती है आकार अतिदीर्घ न होकर लघु होता है। यथा-

'लगड़ी हबा चरचरात जंगल
नोचत जल
केस दिसा बिदिसा
उसाले हैं जबा ।।' (आ.प्र.सिंह)

6:- **संबोध गीत**- जिसे अंग्रेजों में ओड (ODE) एवं उर्दू में 'नज्म' कहते हैं, उसे ही हिन्दी में संबोधगीत कहते हैं। इस गीत में एक सिलसिला रहता है यथा-

निहुरे निहरे चली बदरिया,
छलकै गंध गगरिया
खेतन चली कलमुँही हँसिया
मेंड़न जियरा धरकै
प्रीतन बिसरिउ सोम हिरनियाँ
हरियर चुरिया खनकै
बिरहिन बाजे बीन कोइलिया
घुँघुर चना बजावै
बेसन देह पहिर के हरदी
का जानी का गाबै
हाँफत चली पछाही बइहर
टोरै नरम टिकोरी
लफि लफि जाय जबा के करिहाँ
गेहूँ केर गदोरी
निंच का छींटा मारके फागुन
चला चइत से भेटै
मंदिर के परछाही बइठी
गुलमोहर गुर में है
बूँद पसीना बहै नगीना
छपरा माथ झुकाये
आँखी तरसै घर मा जइसे
सुख के पाहुन आये ।
लाल अगौछी घाम लपेटे
हाँकै दाँय बरेदी
बहै पसीना मँहकै माटी
जइसे गेंदा गेदी
बूसा उड़ै नेता कस भासन
सोने जइसा दाना
बइठ ओसरिया बाबा गावै
संतौ जग बौराना
टपटप माथे मेंहनत टपकै

भुँइयन मोती धाबै
फटही मिरजाई के पीरा
काजर का सुनि पावै।
आधी रात के ननदी जइसे
दूध मा जामन डारै
भूखे बछड़ा के मुँह काही
बड़का बइठ खेलामै।
"कइसे आपन पीर बताई
मन मा बतियाँ राखी
कबौ न अइहै लौटि के दिनमा
गा महुआ बैसाखी ।।' (सुदामा प्रसाद मिश्र)

यहाँ पंक्तियों के आधार छन्दों के नामकरण करने की प्रवृत्ति है।

7:- **त्रिपदी** – इसमें तीन पद होते हैं । संस्कृत में इसे ककुक के नाम से जाना जाता है, लेकिन वहाँ गण बंधन होता है; परन्तु बघेली में यह गण मुक्त रूप में लिखी जाती है यथा-

"दरद फूट बनसेही के काँटा
जाय सब सेहे मा
कमरहबा दबा देहे मा।।" (आ.प्र.सिंह)

8:- **चौपदी**– इसमें चार चरण होते हैं; परन्तु मात्रा का विशेष आग्रह नहीं होता। यथा

"गाँव सहर मा घुसा आबय
दुपहरिया भर डामर के साँप चाबय
पहार के काँधा मा घर भर लटका
गाँव सहर कई पुइयाँ धाबय।।" (आ.प्र.सिंह)

9:- **पंचपदी** – यह पंचपादिक मुक्तक है। यथा-

आँखिन मा आँखिन के पाँव परे
सुर धनुष से तलाब माँ घाव भरे
धन रिनके दाँता किच-किच के ईच-बीच
अँचरा कइयक फुँचरा के छाव भरे
कोयली का पकड़े भोपू काँव-काँव करें।।" (आ.प्र.सिंह)

अलंकार

भाषा की सभी भंगिमाएँ एवं मुद्राएँ अलंकार होती है। अलंकार का मूल चमत्कार है। अलंकारवादियों ने तो रस को भी भावों का चमत्कार माना है। अलंकार की संरचना 'अलं' तथा 'कृ' धातु से हुई है, जिसका अर्थ होता है सजावट। इस तरह काव्य की शोभा बढ़ाने वाले तत्वों

को अलंकार कहा जाता है। "जिस तरह एक नारी की शोभा आभूषण के द्वारा होती है, उसी तरह काव्य की शोभा अलंकारों से होती है।' प्रो. आदित्य प्रताप सिंह के अनुसार-"शोभा की अभिव्यक्ति ही वास्तविक अलंकार है।" अलंकारों का प्रयोग स्वाभाविक रूप से किया जाना चाहिए।

वर्ण, शब्द और अर्थ की दृष्टि से अलंकारों के तीन भेद माने गए हैं-

1- **शब्दालंकार**- जब काव्य में चमत्कार शब्दगत होता है, तो उसे शब्दालंकार कहते हैं। शब्द के पर्यायवाची का प्रयोग करने पर यह चमत्कार समाप्त हो जाता है।

2- **अर्थालंकार**- अब काव्य में चमत्कार अर्थगत होता हैं, तो उसे अर्थालंकार कहते हैं। शब्द के पर्यायवाची का प्रयोग करने पर भी अलंकार उसी तरह बना रहता है।

3- **उभयालंकार**- जब काव्य में चमत्कार शब्दगत एवं अर्थगत दोनों साथ-साथ होते है, तो उसे उभयालंकार कहते हैं।

1- शब्दालंकार- (1) अनुप्रास- जहाँ किसी वर्ण की आवृत्ति एक से अधिक बार होती है, वहाँ अनुप्रास अलंकार होता है। इसके पाँच भेद स्वीकार किए गए है

यथा- **(क) छेकानुप्रास**- जहाँ पर वर्णो की आवृत्ति क्रम से एक बार होती है, वहाँ छेकानुप्रास अलंकार होता है। यथा-

" अबकी सोचि समझि के टप्पा मारा जई भला।
राजा बदलै का है, मुकुट उतारा जई भला।।"

(शिवशंकर मिश्र 'सरस')

यहाँ पर 'सोचि समझि' में 'स' वर्ण की आवृत्ति क्रम से एक बार होने के कारण छेकानुप्रास है।

(ख) वृत्यानुप्रास- जहाँ पर वर्णो की आवृत्ति एक से अधिक अनेक बार क्रम से होती है, वहाँ वृत्यानुप्रास अलंकार होता है। यथा-

"बिरहिन बाजै बीन कोइलिया
घुँघुर चना बजाबै।
बेसन देह पहिर के हरदी
का जानी का गाबै।।" (सुदामा प्रसाद मिश्र)

उपर्युक्त उदाहरण में 'बिरहिन बाजै बीन' में ब की आवृत्ति दो से अधिक बार होने के कारण वृत्यानुप्रास है।

"काकू कोजानी कहां से आय के,
कोजानी का, हमरे बेटउंना का चिखाइगे।
पता नहीं बताइन आपन,
पता नहीं कहां हेराइगे।।" ज्ञानेन्द्र सिंह (घायल)

(ग) श्रुत्यानुप्रास - जहाँ उच्चारण स्थान की एकरूपता के कारण वर्णो की आवृत्ति

एक से अधिक बार होती है, वहाँ श्रुत्वानुप्रास होता है। यथा-

"लाल अगौछी घाम लपेटे, हाकै दाँय बरेदी।
बहै पसीना महकै माटी, जइसे गेंदा-गेंदी।"

(सुदामा प्रसाद मिश्र)

यहाँ पर बहै पसीना मँहकै माटी में प वर्ग के वर्णो की आवृत्ति ब,प,म,म वर्णो का एक स्थान ओष्ठ्य से उच्चारण होने के कारण श्रुत्वानुप्रास है।

(घ) लाटानुप्रास- जहाँ समान अर्थ वाले पदों अथवा वाक्यों की आवृत्ति होती है परन्तु अर्थ में अंतर नहीं होता; किन्तु अन्वय करने पर अर्थभेद उत्पन्न होता है, वहाँ लाटानुप्रास होता है। यथा-

"जउन बनत हय तउन का पढ़ी।
जउन नहीं बनय तउन का पढ़ी।।"

(सू.भा.सिंह)

यहाँ प्रथम एवं द्वितीय पद में क्रमशः जो बनता है उसे क्या पढ़ें एवं जो नहीं बनता है उसे क्या पढ़े का आशय है नहीं पढ़ना। इनके द्वारा भिन्न-भिन्न अर्थ होने थे बाद भी अर्थ में समानता है, इसीलिए यहाँ लाटानुप्रास है।

(ड.) अन्त्यानुप्रास- जहाँ पर पद्य के चरण के अंत में एक या अनेक स्वर व्यंजनों की आवृत्ति हो वहाँ अन्त्यानुप्रास होता है। अन्त्यानुप्रास का सारोकार तुकों से है। यथा -

"आबा चली सहर ते भइया, हम तूँ अपने गाँउ मा।
केतना निकहा सुख पाईथे, ओंह पीपर के छाँउ मा।।"

(भागवत प्रसाद पाठक)

यहाँ पर प्रथम पद के अंतर्गत 'गाँउ मा' एवं द्वितीय पद के अंतर्गत 'छाँउ मा' में एक ही वर्ण की आवृत्ति अंत में होने के कारण अन्त्यानुप्रास है।

2- **यमक** - जहाँ एक शब्द की आवृत्ति कम से कम दो बार होती है; परन्तु अर्थ अलग-अलग होता है, वहाँ यमक अलंकार होता है। यथा-

"मजा रात-दिन काम मा, तऊ मजा से दूर।
ओहिन का मनई कहैं, सब कोऊ मजदूर।।"

(बाबूलाल दाहिया)

यहाँ पहले मजा का अर्थ- अभ्यस्थ एवं दूसरे मजा का अर्थ आनन्द होने के कारण यमक अलंकार है।

3- **श्लेष**- जहां एक ही शब्द में अनेक अर्थ लिपटे होते हैं यानी एक शब्द अनेक अर्थो की प्रतीति कराता है; वहाँ श्लेष अलंकार होता है। यथा-

"जिन्दगी बस
चार, आमा, महुआ
फेर कहुआ।।"

(आ.प्र.सिंह)

यहाँ चार- बाल्यावस्था का प्रतीक, चार संख्या,चार (चिरौंजी)

आमा- किशोरावस्था का प्रतीक, आम का फल।

महुआ- यौवनावस्था का प्रतीक, तरुणाई, मदकता।

कहुआ- वृद्धावस्था का प्रतीक, एक पेड़, नीरसता, शुष्कता एवं कठोरता का प्रतीक हैं।

अतः शब्दों के कई अर्थ होने के कारण श्लेष अलंकार है।

4- **पुनरूक्ति प्रकाश**- जहाँ एक शब्द की आवृत्ति सौंदर्य अथवा छन्द पूर्ति के लिए होती है; वहाँ पुनरूक्ति प्रकाश अलंकार होता है। यथा-

झूम-झूम, झुकुर-झुकुर गेहूँ के बाल।
जइसे लहराय, मोर जियरा हरसाय।।"

(सैफुद्दीन सिद्दीकी)

यहाँ झूम-झूम, झुकुर-झुकुर में सौंदर्य के कारण आवृत्ति हुई है, इसीलिए पुनरूक्ति प्रकाश अलंकार है।

5- **वीप्सा**- जहाँ हर्ष, शोक, घृणा आदर एवं विस्मय को प्रभावी बनाने के लिए शब्दों की आवृत्ति की जाती है; वहाँ वीप्सा अलंकार होता है। यथा-

"रहा!रहा!! तुम खड़े रहा
बहुतन का मार्‌या,
अब कहाँ जइहा।।"

(आ.प्र.सिंह)

यहाँ रहा!रहा!!शब्द की आवृत्ति निर्भयता के आक्रोश को व्यक्त करने के कारण वीप्सा अलंकार है।

2- अर्थालंकार-

1- उपमा अलंकार- जहाँ दो अलग-अलग वस्तु या व्यक्तियों में गुणो की सादृश्यता के कारण समानता दर्शायी जाती है; वहाँ उपमा अलंकार होता है। उपमा अलंकार के चार अंग होते है।

1-उपमेंय- वह व्यक्ति या वस्तु जिसकी दूसरे से तुलना की जाती है।

2-उपमान- वह व्यक्ति या वस्तु जिससे दूसरी वस्तु या व्यक्ति की तुलना की जाती है। जिसके समान कोई वस्तु कही जाय।

3- साधारण धर्म- वे गुण जिनके द्वारा उपमेंय और उपमान की तुलना की जाती है। (समान रूप से पाये जाने वाले धर्म का कथन)

4- वाचक- वे पद या शब्द जिनके द्वारा उपमेंय और उपमान में समानता स्थापित की जाती है। (समानधर्म को जोड़ने वाले शब्द)

उपमा के भेद- (1) पूर्णोपमा- जहाँ उपमा के चारों अंग उपमेंय, उपमान, साधारण धर्म एवं वाचक शब्द विद्यमान रहते है उसे पूर्णोतमा अलंकार कहते हैं। यथा-

"बदरी लै कंजर कस डेरा"

यहाँ बदरी (बादल) की तुलना कंजर के साथ की गई है। अतः बादल उपमेंय है तथा कंजर उपमान है। दोनों को सादृश्य डेरा शब्द से किया गया है जो समान धर्म को दर्शाता है। अतः यह समान धर्म है। कस शब्द समान धर्म को जोड़ने के कारण वाचक शब्द है।

2- लुप्तोपमा- जब उपमा के चारों अंगो (उपमेंय,उपमान, समान धर्म, वाचक शब्द) में से एक या अधिक अंगो का कथन नहीं होता तब लुप्तोपमा अलंकार होता है। इस तरह लुप्तोपमा के चार भेद होते है- 1- उपमान लुप्तोपमा 2- उपमेंय लुप्तोपमा 3- समान धर्म लुप्तोपमा 4- वाचक शब्द लुप्तोपमा । वर्णन में जिन अंगो का लोप होता है; वहीं लुप्तोपमा का भेद होता है। यथा-

"बोझा अस लागत ही जिन्दगी हमार।।"

(विजय सिंह परिहार)

यहाँ जिन्दगी उपमेंय, बोझा उपमान तथा अस वाचक शब्द है; परन्तु समान धर्म नहीं है। इसीलिए यहाँ समान धर्म लुप्तोपमा अलंकार है।

3- मालोपमा- जब एक उपमेंय को अनेक उपमानों के द्वारा वर्णित किया जाता है; वहाँ मालोपमा अलंकार होता है। यथा-

"महुआ कस महँक, बरगद अस बदन।
पके आम अस ओंठ, जामुन कस नयन।
फूली सरसों जस पहिरे पियरी।।"

(गोमती प्रसाद विकल)

उपर्युक्त पद में गोरी उपमेंय के लिये अलग-2 अंगो के वर्णन के साथ महुआ, बरगद, आम, जामुन आदि अनेंक उपमानों की माला बनाई गई है। अतः यहाँ मालोपमा अलंकार है।

3- उत्प्रेक्षा- उत्प्रेक्षा का अर्थ होता है मिलती-जुलती संभावना। जहाँ उपमेंय में उपमान की संभावना की जाती है वहाँ उत्प्रेक्षा अलंकार होता हैं। इसके वाचक शब्द- मनहुँ, मानहुँ जनहुँ-जानहुँ, लागय, लागत आदि हैं। यथा-

"एक बरदा के गाड़ी मन भा उलार।
लागन चितबा के खलरी लागत जाना रात।।"

(आ.प्र.सिंह)

यहाँ लागन चित्त का उपमेंय में जिन्दगी की संभावना लागत वाचक शब्द के माध्यम से होने के कारण उत्प्रेक्षा अलंकार है।

4- रूपक- जहाँ उपमेंय और उपमान में एकरूपता (तद्रूपता) आ जाती हैं वहाँ रूपक अलंकार होता है। इसका वाचक केरि का है तथा रूपी परोक्ष होता है; जिसे (-) चिह्न से प्रदर्शित किया जाता है; परन्तु कहीं-कहीं वाचक शब्दों के प्रयोग से रूपक सीधे आ जाता है; इसीलिए

इसे वेश बदलने वाली नहीं (शैलूष नटी) कहा गया है। कहीं यह उपमा, कहीं रूपक, कहीं उत्प्रेक्षा और कहीं कुछ माना जाता है। यथा-

"धुधुरि केरि गेराई गुढ़ा, बेइमानी के खूँटा लपेटि रहे हँइ।
गांधी बबा के सुराज के साड़िका, छेदि नकेल से नाथि रहे हँइ।"

(सूर्यमणि शुक्ला)

यहाँ धूधुर (धूल) रूपी गेराई गुढ़ा तथा बेइमानी रूपी खूँटा में सुराज रूपी साँड को नाथने के कारण रूपक अलंकार है।

5- **विरोधाभास**- जहाँ वास्तविक विरोध न होते हुए भी विरोध के आभास की प्रतीति होती है; वहाँ विरोधाभाष अलंकार होता है। यथा-

"घाम न लागइ जिन्दगी, चिन्त न सीत समाय।
अइसन होइगै जिन्दगी, बूड़ि-बूड़ि उतराय।।"

(विजय सिंह परिहार)

यहाँ पर बूड़ि बूड़ि उतराय में विरोध न होते हुए भी विरोध की प्रतीति होने से विराधाभास अलंकार है।

6- **सन्देह**- जहाँ उपमेंय एवं उपमान में किसी सादृश्य के कारण अनिश्चय की स्थिति के कारण सन्देह उत्पन्न हो जाय; वहाँ सन्देह अलंकार होता है। यथा-

"कसम से
तितुली का
पहिरे लहँगा
की लहँगा
पहिरे तितुली
जनम-जनम से ।।"

(आ.प्र.सिंह)

यहाँ तितुली उपमेंय तथा लहँगा उपमान है; जिसमें तितली लहँगा पहने है या लहँगा की तितुली (तितली) को पहनें है की स्थिति निर्मित होने के कारण अनिश्चय एवं सन्देह उत्पन्न हो गया है। इसीलिए यहाँ सन्देह अलंकार है।

7- **भ्रान्तिमान**- जहाँ रूप, रंग या आकार सादृश्य के कारण एक वस्तु को दूसरी वस्तु मानने का भ्रम पक्का हो जाय वहाँ भ्रान्तिमान अलंकार होता है। यथा-

"चिपोगी बढ़ी
काकू जरकेटिया
जनाय भालू।।"

(आ.प्र.सिंह)

यहाँ रूप, रंग, अकार के सादृश्य के कारण जरकेटिया (मड़केर) को देखकर भालू का भ्रम हो जाने के कारण भ्रन्तिमान अलंकार है।

उल्लेख- जहाँ एक वस्तु का वर्णन अनेक रूपों में किया जाता है; वहाँ उल्लेख अलंकार होता है उल्लेख में उपमा की माला रहती है। यथा-

"उमड़ा ताल
हबा बहत धौं
तट,नदी,नाव,धौं
चौमत मेंक।।"

(आ.प्र.सिंह)

नदी बह रही है या नाव बह रही है या हवा बह रही है। इस प्रकार मेंढक निश्चित नहीं कर पा रहे है। अतः इसमें संदेह पुष्ट उल्लेख अलंकार है।

9- **अन्योक्ति**- जहाँ किसी बात को सीधे न कहकर किसी दूसरे माध्यम से कहा जाता है; वहाँ अन्योक्ति अलंकार होता है। अन्योक्ति में प्रस्तुत अप्रस्तुत में विलीन नही होता है, जबकि प्रतीक में हो जाता है। यदि हम किसी को गधा कहते हैं तो उसमें मूर्ख ओर गधा दोनों विद्यमान रहते है। जहाँ एक वस्तु का वर्णन अनेक रूपों में इस प्रकार किया जाए कि उसमें चमत्कार आ जाए वहाँ अन्योक्ति अलंकार होता है। यथा-

देस के माँस
सीगट रंगे तकइया
रँगे हाँथ
को पकड़े भइया।।"

(आ.प्र.सिंह)

यहाँ अन्योक्ति के माध्यम से देश की रखवाली करने वालों पर व्यंग्य रंगे सियार के माध्यम से व्यक्त किया गया है।

10- **अपहुति**- जहाँ उपमेंय को छिपाकर उपमान को दिखाया जाय अर्थात एक वस्तु के स्थान पर उससे मिलती जुलती दूसरी वस्तु प्रस्तुत करना या एक वस्तु को कहकर निषेध करना अथवा कोई बहाना प्रस्तुत करना। अपहुति ही मुकरी का रूप धारण कर लेता है। निषेध करना, छिपाना, बहाना बनाना, एक वस्तु के स्थान पर दूसरी वस्तु रखना इसके भाग है। यथा-

"मछुआ नहीं
नदिन मारै अब
मछरिन का।।"

(आ.प्र.सिंह)

यहाँ मछुआरा उपमेंय को छिपाकर नहीं उपमान को कार्य करना बतलाया गया है, जो

कि सत्य नहीं है। इसीलिए अपह्नुन्ति अलंकार है।

11- मानवीकरण- उपमा का सघन रूप रूपक एवं रूपक का सघन रूप मानवीकरण है। मानवीकरण सांग रूपक के निकटस्थ है। जब अमूर्त में मूर्त का आरोपण किया जाता है तब मानवीकरण अलंकार होता है। यथा-

"बदरी लै कंजर कस डेरा।
हथिया मारि देय चउथेरा।।"

(कालिका प्रसाद त्रिपाठी)

यहाँ बदरी और हथिया अमूर्त हैं तथा कंजर कस डेरा, मारि देय चउथेरा मूर्त होने एवं मानव की तरह कार्य करने के कारण मानवीकरण अलंकार है।

12- स्मरण- जहाँ किसी विशिष्ट वस्तु या व्यक्ति को देखने से उसकी समानता के कारण पहले देखी सुनी वस्तु का चमत्कार पूर्ण स्मरण वर्णित हो; वहाँ स्मरण अलंकार होता है। यथा-

"कइयक गलिन से गुजरिगै होई।
उआ अपने घर पहुँचिगैं होई।
ओखे खिरकी के अरे-तरे
साँझ अउर सुन्दर होइगै होई।"

(आ.प्र.सिंह)

यहाँ सहृदय के मन में अपनी प्रियतम के कल्पना चित्र का प्रतिबिम्बन किए जाने के कारण स्मरण अलंकार है। इसके लिए तीन बातें आवश्यक है- 1 वस्तु पहले से देखी सुनी हो 2- उसी तरह की वस्तु हो 3- चमत्कार पूर्ण वर्णन हो।

13- परिकर- जहाँ साभिप्राय विशेषण का प्रयोग होता है, वहाँ परिकर अलंकार होता है। यथा-

"खोथा कइती।
साँझ लिहे उड़त।
सोचान हड़िया ।।" (आ.प्र.सिंह)

यहाँ सोचान (चिन्तित) विशेषण पद द्वारा हड़िया (कौआ) की स्थिति का वर्णन अभिप्राय सहित किए जाने के कारण परिकर अलंकार है।

14- परिसंख्या- जहाँ किसी वस्तु का एक जगह निषेधकर दूसरी जगह स्थापना का वर्णन हो; वहाँ परिसंख्या अलंकार होता है। यथा-

"मदार छोड़
अंधा सामन राज
मोटान घोड़।।" (आ.प्र.सिंह)

मदार को छोड़कर अन्य सभी जगह हरियाली है। यहाँ हरियाली की स्थापना मदार को

छोड़कर अन्य सभी जगह होने के कारण परिसंख्या अलंकार है।

15- विशेषण विपर्यय- जहाँ विशेषण को उसके स्थान से हटाकर दूसरी परिवर्तित किया जाता है; वहाँ विशेषण विपर्यय अलंकार होता है। विपर्यय का अर्थ होता है स्थान परिवर्तन; जिसमें मूर्त रूप विशेष के विशेषण को अमूर्त विशेषण बना दिया जाता है। यथा-

> ''बरखा नाचै
> मोर पखनन मा
> सुर धनुख।।''
>
> (आ.प्र.सिंह)

वर्षा नहीं नाच रही है; लेकिन वर्षा के नृत्य को मयूर के नृत्य में ढाला गया है; इसलिए विपर्यय अलंकार है।

16- काव्यलिंग- काल्पित कारण दिए जाने पर काव्य लिंग अलंकार होता है। यथा-

> ''कुइनी केर गोराई, सुरूज के आँखी मा झूलै।
> येंसे कुइनी अँधियारे मा, रोज रात के फूलै।।''
>
> (श्रीनिवास शुक्ल)

यहाँ पर कुइनी के रात्रि में फूलने का काल्पित कारण दिए जाने के कारण काव्यलिंग अलंकार है।

17- असंगति- जहाँ कारण और कार्य की निष्पत्ति अलग अलग होती है। अर्थात् कारण कहीं होता है कार्य कहीं होता है; वहाँ असंगति अलंकार होता है।यथा-

> ''बदरा लिखै
> सरग मा कबिता
> भुँइ मा अरथै।।''
>
> (आ.प्र.सिंह)

बादल की कबिता आकाश में लिखी जाती है; लेकिन उसकी सार्थकता धरती को सजला करने में है। अतः यहाँ असंगति अलंकार है।

18- देहरी दीपक- दो भावों को जोड़ने वाले को देहरी दीपक अलंकर कहते हैं। यह संयोजक अलंकार है। संयोजक शब्द संज्ञा भी हो सकता है और क्रिया भी। यथा-

> ''जिनखे ओरी
> चुअना चुअय रे।
> गरीब के आँखी ।।''
>
> (आ.प्र.सिंह)

यहाँ चुअय और चुअना शब्दों द्वारा गरीबों की आँखो का संयोजन कर रहे है। अतः देहरी दीपक अलंकार है।

बिम्ब- बिम्ब चाक्षुस होता है। बिम्ब स्थूल एवं सूक्ष्म होता है। बिम्ब में भाव, विचार और कल्पना का एकीकरण होता है। बिम्ब में अर्थ नियंत्रित होता है। कालिका की कविता में रंग बिम्बो का बाहुल्य रहता है।

बिम्ब के रूप- 1- रंग बिम्ब 2- रूप बिम्ब 3- गंध बिम्ब 4- स्पर्श बिम्बं 5- स्वर बिम्ब।

1- रंग बिम्ब-"चिमनी पोंछ
नदिया मा नहाय
भादौं के रात।।"

(आ.प्र.सिंह)

इसमें स्याह निशा का रंग बिम्ब है।

2- रूप बिम्ब -"ओरमानी अधियारे माँही, अँगना के मुँह झाँकै।
केमरा के ही संघ से अँगना, फरिका के मुँह ताकै।"

(श्रीनिवास शुक्ल'सरस')

इसमें अँगना का रूप बिम्ब है।

3- गंध बिम्ब :-"लहरि-लहरि हबा चली, मँहकि उठी राति ।
बिरबन के फुनगी तक, फइलि जई बाति।।" (विजय सिंह परिहार)

इसमें हवा का गंध बिम्ब है। गंध बिम्ब घ्राण से संबंधित होता है।

4:- स्पर्श बिम्ब :-"छूतइ आबन का बउराबइ ।
सेमरा, छिउला, का ललबाबइ।।
फुलबाबइ कचनार ।
मँहकि उठे मोर अँगना ।।" (डॉ. अमोल बटरोही)

यहाँ बसंत के स्पर्श एवं प्रभाव का वर्णन है, जिसमें स्पर्श बिम्ब प्रधान एवं गंध बिम्ब उसके साथ है।

5:- स्वर बिम्ब :- "डोंगरी चितकबरी घमछहियाँ,
बादर सरकै पोंदी पइयाँ।
छनन-मनन सरहज कस बिजुरी
कहा हेरानी रे।।" (कालिका त्रिपाठी)

यहाँ पर छनन-मनन में स्वर बिम्ब है।

प्रतीक

प्रतीक का अर्थ संकेत होता है। जब प्रस्तुत और अप्रस्तुत दोनों रहते हैं तब अन्योक्ति अलंकार होता है; किन्तु जब प्रस्तुत अप्रस्तुत में विलीन हो जाता है, तब प्रतीक होता है। जैसे मूर्ति की पूजा नहीं की जाती, अपितु मूर्ति में पूजा की जाती है। मूर्ति अप्रस्तुत इष्टदेव में विलीन हो जाती है। बिम्ब का संबंध चित्रकला से होता तो प्रतीक का संगीत से। बिम्ब लाक्षणिक होते

है तथा प्रतीक व्यंजनात्मक। प्रतीक में प्रभाव का चित्रण होता है।
बघेली प्रतीकों के नमूने -

1- **रंग प्रतीक** :- "एँगुर धोय किरन भय सोनही
टँगै रोज सरग मा धनुही ।
छनन-मनन सरहज कस बिजुरी,
कहाँ हेरानी रे ।।" (कालिका प्रसाद त्रिपाठी)

लालरंग प्रेम का प्रतीक है और राजनीतिक क्षेत्र में साम्यवादी पार्टी का प्रतीक है।

2- **चित्र प्रतीक** :- "दुइ दाना रोज रटै,
खोंपा कइ चिरई ।
भूख बइजही माँगै,
रोटी कइ बिरई ।।" (कालिका प्रसाद त्रिपाठी)
यहाँ चिरई चित्र प्रतीक है।

3- **व्यंग्यात्मक प्रतीकः-** "तोप मा गज
कबूतर उड़ामैं
सांति रे सांति ।।" (आ.प्र.सिंह)

व्यंग्यात्मक प्रतीक में राजनीति, सामाजिक बुराईयाँ तथा किसी कमी का संकेत रहता है।
चुप्पय घुसके खाय लेयत हय,
बागय छोरे चूंदी।
अपने हाथय बछिअव भर का,
नहीं दिहिस सरफूदी
सोचत होई मन मा,
नीक नउकरी पाउब
मिलिहिं नउकर-चाकर
ता खूब मउज उड़ाउब।।

ज्ञानेन्द्र सिंह (घायल)

उपर्युक्त उदाहरण में चूंदी प्रतीक के रूप में आया है।

4- **मनोवैज्ञानिक प्रतीक** :- "फूले का उड़ा
गोदिली मा गा फे-फे
कादौं मा भिन्ना ।।" (आ.प्र.सिंह)

पहले उच्चतर प्रयोजन फूल फिर निम्न से निम्नतर क्रमिक मनोवैज्ञानिक क्रम अलंकार भी है।
भिन्ना मनोवैज्ञानिक प्रतीक है।

5- **ऐतिहासिक प्रतीक** :- "हबा मा टेसू
बुद्ध का नमन करैं
लाखन भिच्छु ।।" (आ.प्र.सिंह)

किसी महापुरुष या घटना से जुड़ा संक्षिप्त विवरण ऐतिहासिक प्रतीक में आता है।

6- **धार्मिक प्रतीक** :- धार्मिकों का आधार आस्था है। बघेली में तिरसूल (त्रिशूल) शंकर का प्रतीक है।

7- **राजनैतिक प्रतीक** :- " लाल गुमारा
छूतय पइसा भा
रूप तोहार। (आ.प्र.सिंह)

लाल गुमारा संकीर्ण समूहबाद का प्रतीक है। इसी तरह से हत्था कांग्रेस का, बरा समाजवादी एवं कमल भारतीय जनता पार्टी का सूचक है। बघेली बोली में लोखड़फन्द पुराना मुहावरा है। लोखड़फन्द कूटनीति का द्योतक है।

संदर्भ ग्रन्थ सूची

1. हिन्दी काव्यांगदर्शन : पं. चक्रनाथ शुक्ल
2. छन्द शास्त्र : डॉ. जगदीश प्रसाद कौशिक
3. अलंकार शास्त्र : डॉ. जगदीश प्रसाद कौशिक
4. भाषा विज्ञान : डॉ. भोलानाथ तिवारी
5. राष्ट्र भाषा व्याकरण : पं. चक्रनाथ शुक्ल
6. आधुनिक हिन्दी व्याकरण : डॉ. राजेन्द्र मोहन भटनागर
7. भारतीय एवं पश्चात्य काव्य- शास्त्र के सिद्धांत : डॉ. राजकिशोर सिंह एवं डॉ.दुर्गाशंकर मिश्र
8. भाषा विज्ञान : डॉ. धीरेन्द्र वर्मा
9. मुग्ध बोध भाषा विज्ञान : डॉ. रामेश्वर दयाल अग्रवाल
10. हिन्दी साहित्य कोश भाग-1, भाग-2 : सम्पादक - डॉ. धीरेन्द्र वर्मा (प्रधान)
11. भाषा विज्ञान : डॉ. दान बहादुर पाठक एवं डॉ. मनहर गोपाल भार्गव

बघेली काव्य संकलन (प्रकाशित)

1. बैजू की सूक्तियाँ : श्री बैजनाथ प्रसाद 'बैजू'
2. धरती केर महँक : श्री रामदास पयासी
3. अनव्याही सुधियाँ : श्री राजीवलोचन शर्मा
4. दिया बरी भा अजोर : श्री सैफुद्दीन सिद्दीकी
5. भारत केर माटी : श्री सैफुद्दीन सिद्दीकी
6. हिमालय केर कनियाँ : डॉ. अमोल बटरोही
7. विन्ध्य केर माटी : श्री बाबूलाल दाहिया
8. रणमत सिंह : श्री गोमती प्रसाद विकल
9. रणजीत राय : श्री गोमती प्रसाद विकल
10. सँझवाती : श्री भागवत प्रसाद पाठक

11.रसखीर : श्री निवास शुक्ल 'सरस'
12.भला बताबा का करी : श्री सुधा कान्त मिश्र 'बेलाला'
13.चाईं-माईं : श्री सूर्यमणि शुक्ल 'मनगलित'
14.सोन और रेवा के स्वर : सम्पा.- डॉ. कमला प्रसाद पाण्डेय

बघेली (प्रकाशित ग्रन्थ)

1. बघेली भाषा और साहित्य : डॉ. भगवती प्रसाद शुक्ला

बघेली (अप्रकाशित ग्रन्थ)

1. बघेली का अधुनातन काव्य (लघुशोध) : श्री सूर्यभान सिंह
2. बघेलखण्ड और छत्तीसगढ़ के आधुनिक लोक कवियों का तुलनात्मक अध्ययन (शोध) : डॉ. सूर्यभान सिंह

बघेली कविता (कवियों की डायरी से)

1. श्री हरिदास (गुढ़ क्षेत्र से प्राप्त)
2. प्रो. आदित्य प्रताप सिंह 'अनाम'
3. श्री रामलखन शर्मा 'निर्मल'
4. डॉ. सूर्यभान सिंह
5. श्री शम्भू प्रसाद द्विवेदी 'काकू'
6. श्री चित्रेश चित्रांशी
7. श्री सुदामा प्रसाद मिश्र
8. श्री शिवशंकर मिश्र 'सरस'
9. श्री गोमती प्रसाद विकल
10. श्री बाबूलाल दाहिया
11. श्री सैफुद्दीन सिद्दीकी
12. श्री विजय सिंह परिहार
13. श्री सूर्यमणि शुक्ला
14. श्री कालिका प्रसाद त्रिपाठी
15. श्री मैथिली शरण शुक्ल 'मैथिली'
16. श्री रामचन्द्र सोनी 'विरागी'
17. श्री हरवक्श सिंह
18. श्री ज्ञानेन्द्र सिंह ''घायल''
19. श्री राजेश सिंह